Bodleian Libraries
UNIVERSITY OF OXFORD

This book is part of the collection held by the Bodleian Libraries and scanned by Google, Inc. for the Google Books Library Project.

For more information see:

http://www.bodleian.ox.ac.uk/dbooks

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 2.0 UK: England & Wales (CC BY-NC-SA 2.0) licence.

Hindi
RatK 2

Hindi RatK
2

13. D. 64.

Indian Institute, Oxford.
The Lucknow Sparks Library.
Presented
by
Munshi Newul Kishore.

Premaratna.

Prem Rattan

# प्रेमरत्न

پریم رتن

समस्त विद्या विशारद श्रीयुत राजा शिवप्रसाद जी
तृतीय सितारेहिन्द की पितामही रत्नकुँवरिदेवी कृत

## जिस में

स्वभक्त भय हारक दैत्यगण मारक रसिक शिरोमणि आ-
नन्द कन्द श्री कृष्णचन्द्र और राधिका जी के रास विलास
आदि अनेक चरित अति सरस छन्दों में वर्णित हैं

तीसरी बार

लखनऊ
मुंशी नवलकिशोर के छापेखाने में छापी गई
जनवरी सन् १८८१ ई०

# विज्ञापन

श्रीगणेशायनमः॥ ॥बहुतेरे मनुष्य ऐसा कहते हैं कि अब इस काल में स्त्रियों का पढ़ना लिखना भारतवर्ष से लोप हो गया और बहुतेरे ऐसा भी कहते हैं कि यह जाति अर्थात स्त्री पढ़ने लिखने के योग्य ही नहीं इन के पढ़ाने लिखाने में चाहे जितना परिश्रम करो कदापि कुछ न आवेगा कितने ही ऐसा शोचते हैं कि जो स्त्री पढ़ना लिखना सीखेंगी अवश्य बिगड़ जायंगी और कुमार्ग गामी होंगी और कितने अगले समय की स्त्रियों का वृत्तान्त मन से भुला कर ऐसा समझते हैं कि नारी का चित्त ही विद्या उपार्जन में न लगेगा इन्हें विधाता ने केवल घर गृहस्थी का काम करने को रचा है इस कारण हम ने अपनी दादी बीबी रत्नकुँवरि का बनाया हुआ यह प्रेमरत्न ग्रन्थ छपवाने का उद्योग किया है वह संस्कृत में बड़ी पंडिता थीं छहों शास्त्र की वेत्ता पारसी भाषा भी इतनी जानती थीं कि मौलाना रूम की मसनवी और दीवान शम्सतबरेज़ जब कभी हमारे पिता पढ़ कर सुनाते तो वह उस का सम्पूर्ण आशय समझ लेतीं गाने

बजाने में अत्यन्त निपुण थीं और चिकित्सा यूनानी और हिन्दुस्तानी दोनों प्रकार की जानती थीं योगाभ्यास में परिपक्व और यम नियम और वृत्ति ऋषि मुनियों की सी सत्तर वर्ष की अवस्था में भी बाल काले और आंखों की ज्योति बालकों की सी वह हमारी दादी थीं इस से हम को अब उन की अधिक प्रशंसा लिखने में लाज आती है परन्तु जो साधु सन्त और पण्डित लोग उस समय के उन के जानने वाले काशी में वर्त्तमान हैं वह उन के गुणों को यद्यावधि स्मरण करते हैं ॥

शिवप्रसाद

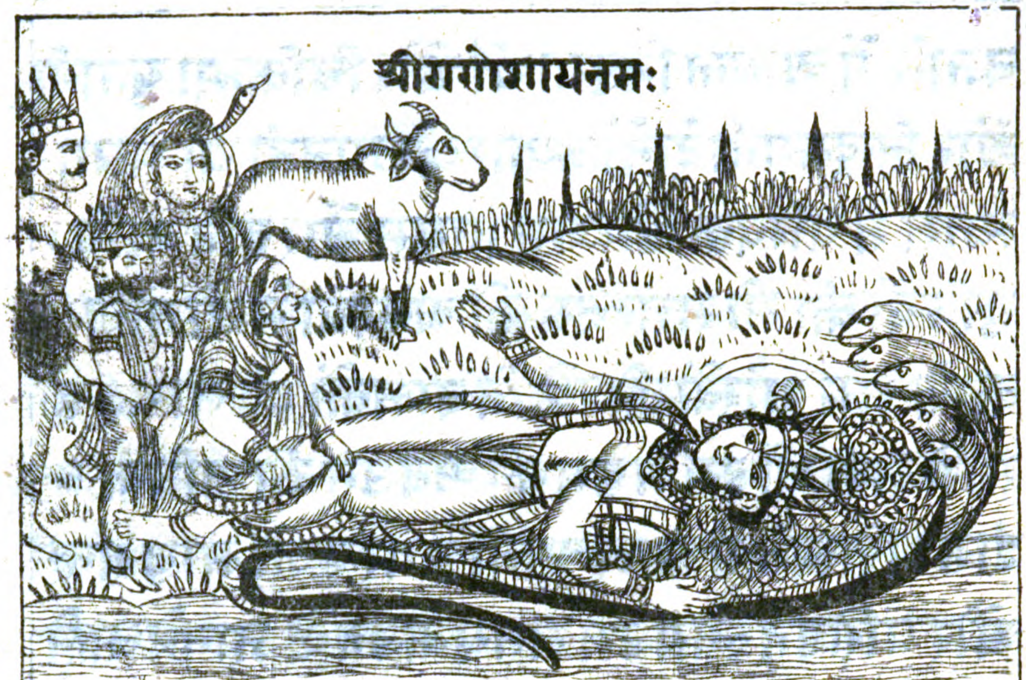


श्री राधा कृष्णाय नमः ॥ अथ प्रेमरत्न लिख्यते ॥ सोरठा ॥ अविगत आनँद कन्द । परम पुरुष परमात्मा ॥ सुमिरि सुपरमानन्द । गावत कछु हरि यश विमल ॥ १ ॥ पुनि गुरु पद शिर नाय । उर धरि तिन के वचन वर ॥ कृपा तिनहिं की पाय । प्रेमरत्न भाषत रतन २ ॥ अगम उदधि मधि जाहि । पंगु तरहिं बिनु जिमि तरनि ॥ तैसिय रुचि मन माँहि । अमित कान्ह यश गान की ॥ ३ ॥ पै मो मन विश्वास । पुरवत पूरण काम प्रभु ॥ उर पुर सकल निवास । निज जन को अभिलाष लखि ॥ ४ ॥ लीला अगम अपार । पार न पावैं शेष शिव ॥ जासु स्वास श्रुति चार तिहि गुण गण को गनि सकहिं ॥ ५ ॥ अमित चरित्र विचित्र । यथा शक्ति गावत सकल ॥ निज सुख कारन पवित्र

(भाखा)

भागवत हरि गुण गण विमल॥ ६ ॥भक्त हृदय सु-
खं देन। प्रेम पूरि पावन परम॥ लहत श्रवण सुनि
चैन। भव वारिध तारण तरण॥ ७ ॥इहाँ कहौं विस्ता-
र विमल सकल कुरुक्षेत्र को॥ कथा जु प्रथम उदार
करि बरणौं संक्षेप तिहि॥ ८ ॥दोहा॥ भई भूमि जब
दुखित अति। असुरन के अघ भार॥ ब्रह्मादिक सुर
संग ले। चली धेनु तन धार॥ १ ॥क्षीर सिंधु के तीर
मिलि। कीन्ही जाय पुकार॥ अस्तुति करि विस्तार
सब। निज निज मति अनुसार॥ २ ॥जय जग वन्द मु-
कुन्द हरि। जय जय सच्चिद रूप॥ जय जय पूरण ब्र-
ह्म प्रभु। नित्यानन्द स्वरूप॥ ३ ॥जय जय प्रण तार-
त हरण। पुरुषोत्तम जगदीश॥ गुणागाध निर्बाध
अज। सकल विश्व मन शीश॥ ४ ॥कारण करण अ-
नन्त गुण करिय सकल उद्धार॥ हरिय नाथ धरणी ग-
रुव। धरिय मनुज अवतार॥ ५॥ कमलाकर चापत
चरण। शेष सेज में सैन॥ बोले करुणा ऐन प्रभु। सु-
नि सुर गद गद बैन॥ ६ ॥जन दुख देखि दुखित सदा।
करुणासिन्धु खरारि ॥ अवनी हित अघ हरण हरि
कह्यो लेन अवतार॥ ७ ॥गगन गिरा सुनि हरषि सुर
आये निज निज धाम॥ पुनि गर्भा कर्षण भये। सं-
कर्षण बलराम॥ ८ ॥ चौपाई॥ अब हरिजन्म कहौं

शुभ गाई। सुनत सकल जिहि पाप नशाई॥ भादों तिथि अष्टमि बुध वारी। रजनि कृष्णा अवतरे मुरारी १॥ माता पितहि कृतारथ कीन्हो। चारि भुजा धरि दरशन दीन्हो॥ पुनि प्रभु तिन कहँ बहु समुझाए। गोकुल गोप वृन्द गृह आए॥ २॥ महर भवन भए आनँद भारी। मुदित सकल व्रज के नरनारी॥ तहँ बस बालकेलि रस कीन्हा। तात मात व्रज जन सुख दीन्हा॥ ३॥ पुनि मधुबन गवनत नँदलाला। गोपी ग्वाल भये बेहाला॥ बहुरि मिलन तिन सों प्रभु भाख्यो। अवधि लागि तिन प्राणहिं राख्यो॥ ४॥ मथुरा जाय असुर संहारे। कंस मारि भुव भार उतारे॥ उग्रसेन शिर छत्र धराये। जनक जननि कहँ निगड़ छुड़ाये॥ ५॥ बहुरि द्वारका जाय बसाई। छपन कोटि लै यदु समुदाई॥ ऋधि सिधि तहँ नव निधि विधि छाई। कंचन पुरी पुराणन गाई॥ ६॥ ब्रह्म लोक जिहि लखत लजावे। सो सम्पति कापै कहि आवे॥ तहँ हरि भये द्वारका नाथा। द्वारावति को करी सनाथा॥ ७॥ इक शत अष्ट प्रिया पट भाखी। सोरह सहस महल अरु राखी॥ सो सकलन में सरस पियारी श्री रुकमिणि की बातहि न्यारी॥ ८॥ तिन तें हरि अन्तर नहिं राखें। छिन छिन की निज मन की भाखें।

इक दिन चली प्रेम की गाथा । हा व्रज कहि शोच्यो यदुनाथा ॥ ९ ॥ तब रुक्मिणि प्रभु सन कर जोरी । बोली वचन मधुर रस बोरी ॥ पुरी द्वारका सम नहिं कोऊ । अमरावती न पट तर सोऊ ॥ १० ॥ पितु वसुदेव देवकी माता । ऋद्धि सिद्धि नव निधि विख्याता ॥ षट रस सहस आठ पटरानी । सो सम्पति प्रभु मनहिं न मानी ॥ ११ ॥ पुनि पुनि सुमिरत गोकुल ग्रामा । उर ते नहिं बिसरत सो ठामा ॥ तिन की प्रीति कहो समुझाई । जिन में तुम मन रहत सदाई ॥ १२ ॥ सुनि रुक्मिणि के वचन सुहाये । प्रेम पुलक लोचन जल छाये ॥ तब बोले यों राजिव नयना । तुम जु कहत सो साँचे बयना ॥ १३ ॥ पितु वसुदेव देवकी माई । तिनहूं करत छोह अधिकाई ॥ पै नहिं मोहिं विसरत व्रज वाता । नन्द बबा अरु यशुदा माता ॥ १४ ॥ तिन की प्रीति बरणि नहिं जाई । जिहि विधि मैं उन ते सुख पाई ॥ छिन छिन सुख लखि लेत बलैया । को सप्रेम अब कहै कन्हैया ॥ १५ ॥ कहूं सद माखन मैया करि कै । मथि राखत मेरे हित धरि कै ॥ व्रज सुख नहिं विसरत विसराए । जिहि लखि सुर मुनि मन ललचाये ॥ १६ ॥ दोहा ॥ वह वृन्दावन सुख मघन । कुञ्ज कदम की छाहिं ॥ कनक मई यह ।

द्वारका। ता की रज सम नाहिं॥ १॥नृपति सभा
सिंहासनरु। जिहि लखि लजत अनंग॥नहिं बि-
सरत वह मखन को। गोचारन बन संग॥ २॥राज
साज साजे सकल। तिमि नहिं नेकु सुहाहिं॥ गुंज
माल बन चित्र जिमि। मोर मुकुट मन माहिं॥ ३॥
रानी सोरह सहस तुम। करत रहत अति प्रीति॥
श्री राधा छबि मोह की। कछुही न्यारी रीति॥ ४॥
गोपी सोरह सहस सब। लोक लाज पति त्याग॥
अर्द्ध निशिहि रस रास करि। मम हित तें चित पाग
५॥ बिछुरत तिन ते सकुचि मन। कह्यो मिलहु पुनि
आय॥ उन तें उऋण भयो नहीं। रह्यो द्वारका छाय
६॥ बहुरि जाय ब्रज भेंटिये। नटवर भेष बनाय॥ ब्र-
ज बासिन सुख दीजिये। मुरली मधुर बजाय॥७॥
निशि दिन मेरो ही रहत। ब्रज बासिन में ध्यान॥
करत बनत अब बात सुहि। उनहीं के मन मान॥
८॥ चौपाई॥ भक्ताधीन बिरद प्रभु केरे। गावत बा-
नी वेद घनेरे॥ सन्तत रहत भक्त के पासा। पुरवत
हैं प्रभु तिन की आसा॥ १॥जे सप्रेम हरि सों चित
लावैं। तिन को कबहूं नहिं बिसरावैं॥ ग्राह ग्रसि-
त गज जाय छुड़ाये। गरुड़ छांड़ि तहँ आतुर धाये
२॥पुनि प्रभु पाण्डव जरत बचायो। द्रुपद सुता को

बसन बढ़ायो ॥ अजामेल यम ते रख लीन्हो । भजन
प्रताप ध्रुवहि वर दीन्हो ॥ ३ ॥ जन प्रहलाद अभय
करि थाप्यो । ताती वाय न वारहि व्याप्यो ॥ जो ज-
न मत्त ते ध्यावहिं जैसे । ता कहँ प्रगट होत प्रभु तैसे
४ ॥ अग जग सकल विश्व के स्वामी । सर्व मर्य्यास
व अन्तरयामी ॥ प्रेम युक्त व्रज जन मन ध्यायो । ता
ते प्रेम हृदय हरि छायो ॥ ५ ॥ प्रभु के मन यह रहत
सदाहीं । व्रज बासिन तें मेल्यो नाहीं ॥ इक दिन ।
दिन कर ग्रहण भयो जब । बहु नर नारी जात चले
तब ॥ ६ ॥ जानि परम कुरुक्षेत्रहि पावन । सकल ।
चले तहँ ग्रहण नहावन ॥ यह सुनि यदु नन्दन मन
बानी । एक पन्थ द्वै कारज ठानी ॥ ७ ॥ कह्यो यदुन
प्रति यदुकुल केतू । हम सबहू चलिये कुरुक्षेतू ॥ अ-
रु जेते परिजन पुरबासी । तिनहुं कहहु यह बात प्र-
कासी ॥ ८ ॥ ग्रहण नहाहु सकल तहँ जाई । सुनि
आयसु सब शीस चढ़ाई ॥ मुदित सकल आनँद
रस पागे । गवन साज साजन कहँ लागे ॥ ९ ॥ अ-
धिकारिन सब साज सँवारे । नाना बाहन शुभग ।
सिंगारे ॥ अरु महलन के साज नवीने । ता पर वर
बसननि कसि दीने ॥ १० ॥ सुनत परस्पर सब नर
नारी । घर घर निज निज सौज सँवारी ॥ द्वारावति

के जिते निवासी। चले आत सब परम हुलासी॥ ११
बढ़्यो कटक अति परम विशाला। चले संग अगणित भूपाला॥ निज निज फेटन लीन्हो कसि कर चले सकल हरि यश कर लसकर॥ १२॥ कारे करि वर गरजन लागे। सावन घन जनु लखि अनुरागे। अगणित तुरँग चले हिहिनावत। खच्चर सहस ऊँट अर रावत॥ १३॥ चौपालन सुख पाल पालकी। डोली अरु चराडोल नालकी॥ अमित भीर मग धरत न पायो। धूरि धुन्ध नभ मण्डल छायो॥ १४
मग में होत कोलाहल भारी। मुदित करत कौतुक नर नारी॥ यों पहुँचे कुरुक्षेत्रहि जाई। परि गयो कटक तहाँ सिति छाई॥ १५॥ हाट बजार दुकान सुहाई तहँ सब वस्तु मिलत मन भाई॥ देश देश के यात्री आये। भये तहाँ मिलि अनँद बधाये॥ १६॥ दोहा॥
वरण वरण वर तम्बु बन। दीन्हो तान वितान॥ अति फूले भूले फिरत। डेरा धरत न जान॥ १॥ जब ते मथुरा तन चिते। तजि व्रज जन यदुनाथ॥ विरह विथा व्रज में बढ़ी। तहँ सब भये अनाथ॥ २॥ सोइ तीरथ कुरुक्षेत्र सब आये ग्रहण नहान॥ यशुमति राधा गोपि गण। नन्दादिक वृषभान॥ ३॥ गोप एक नट भेष सजि। आयो बीच बजार॥ तहँ खर भरलसका

पस्यौ। सो अति रह्यौ निहार॥ ४॥ गुंजा भूषण पंख सिखि। खोंसे लटपट पाग॥ जँघ जँघिया चित्रित सुतन। लखि सब कौतुक लाग॥ ५॥ इक यादव हँसि के कह्यौ। कहाँ तुम्हारो बास॥ अति सुन्दर तन छबि बनी। नाम कहहु परकास॥ ६॥ तब उनहूँ कहि तुम कहहु। काके संग कित ठाउ॥ द्वारावति पति कटक यह। कह्यौ यदुव निज नाउ॥ ७॥ सुनत द्वारिका नाम तिहि। लियो बिरह उर छाय॥ हा नंद नन्दन कान्ह कहि। गयो ग्वाल मुरझाय॥ ८॥ चौपाई॥ इक गोपाल संग मम जाई। बस्यो नृपति ह्वै सोइ पुर छाई॥ हम कहँ छाँड़ि भयो सो न्यारे। ताही बिनु सब भये दुखारे॥ १॥ तुम लसकर ये भूप उदारा। कस बूझत हम जात गँवारा॥ सुनि यादव कछु मन बिहँसाना। तुम व्रजबासी हौ हम जाना॥ २॥ जिन को तुम भाषत गोपाला। उनहीं को यह कटक रसाला॥ अब दुख मेटहु भेंटहु तिन तें। गयो ग्वाल हरि कटकहि सुन तें॥ ३॥ तिन कहँ आगम सगुण जनायो। कछु अनन्द ह्वै है मन आयो॥ ग्वालहि आवत रहे निहारी। गद गद कण्ठ न सकत सम्हारी॥ ४॥ दूरहि ते बोल्यो गोपाला। मनमोहन आये नँदलाला॥ जिन बिन सब व्रज भयो दुखारे। ते आये इहँ प्राण पियारे॥ ५

सुनि गोपिन नहिं परत पत्यारो। कहं ऐसो है पुराय हमारो॥ सुनत नन्द नयनन जल छाये। ऐसो भाग कहा हम पाये॥ ६॥ खोजत्तेव सब पूछहु सारे। कहं उतरे प्राराान के प्यारे॥ सुनतहि यशुमति ह्वै गइ बौरी। ता ग्वालहि पूछत उठि दौरी॥ ७॥ आये श्याम सत्य कहु भैया। मोहिं दिखावहु नेकु कन्हैया॥ निज लालन को कराठ लगाऊं। दुसह विरह को ताप नशाऊं॥ ८॥ कत अत गहरु करत बेकाजहि। भेटहु बेगि सकल ब्रज राजहि॥ तब ऐसे भाख्यौ नँदराई। अब हरि होंहिं न ब्रज की नाई॥ ६॥ मरिा नख चित बैठत सिंहासन। चँवर छत्र कर गहे खवासन॥ अतिहि भीर नृप वारन पावे। द्वारहि ते बहु फिरि फिरि जावे॥ १०॥ क्षत्र पतिहि छरियन बिल गावत। तहँ हम सब की कौन चलावत॥ छपन कोटि यदु छाँड़ि सगाते। क्यों माने धायन के नाते॥ ११॥ कोउ कह ऐसे कैसे जैहैं। हम कहँ लखि हरि मनहिं लजैहैं॥ कोउ कह मरिा आभूषरा पहिरे। अम्बर वर विचित्र रँग गहिरे॥ १२॥ कोउ कह हम तो ऐसहि जाहीं। अब तो कछु बनि आवत नाहीं॥ हरि को देखि परम सुख पैहैं। ता अनुचर कर मारहु खैहैं॥ १३॥ कोउ कह हम नीके भुज भरिहैं। भए भूप।

तो काधौं करिहैं ॥ करत मनोरथ कोउ मन माहीं ।
कोऊ खोज लेन उठि जाहीं ॥ २४ ॥ कहत परस्पर मुदि-
त गुवाला । अब तो फिरि आये गोपाला । इक कह
अब गोकुल लै जैहैं । हम तें बहुरि जान कहं पैहैं ॥ २५
कोउ नाचत हैं दै कर तारी । बहु विधि करत कुलाहल
भारी ॥ इक एकन तें देत बधाई । मानहुं सबन गई नि-
धि पाई ॥ २६ ॥ दोहा ॥ लघु दीरघ वै नारि नर । सुमिर-
त श्याम सनेह ॥ भये मगन सब प्रेम रस । भूलि गये ।
निज देह ॥ १ ॥ कहति परस्पर युवति मिलि । लैलै कर
अकवार ॥ प्रीतम आये री सखी । तन साजहु सिंगार
२ ॥ इक आई आनँद उमगि । प्यारिहि देत बधाय ॥
प्राण नाथ सुख देन इहाँ । मोहन उतरे आय ॥ ३ ॥ तहँ
राधा की कछु दशा । वरणत आवै नाहिं ॥ मलिन भे-
ष भूषण रहित । विवस रहत तन माहिं ॥ ४ ॥ कबहुं
भुरावत विरह बश । पीत वरण ह्वै जाय ॥ कबहूं व्या-
पत अरुणता । प्रेम मगन मुद छाय ॥ ५ ॥ कान्ह का-
न्ह कबहूं कहत । कबहूं रटत निज नाम ॥ मौन साधि
रहि जात जब अमित होत अति बाम ॥ ६ ॥ चख चि-
तवत जित तित हरि । श्रवण मुरलि धुनि लीन ॥
श्याम वास बसि नाक मग । रूप पयोनिधि मीन
७ ॥ तन मन धन गृह जनन की । नेकहु सुधि तिहि

नाहिं ॥ चितवत काहू नहिं इगान । लगन लगी उर माहिं ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ मन भावन आवन सुनि जागी भई चेत चित चितवन लागी ॥ कहि कित ठाढ़े री गोपाला । ह्वै जु कहत आये नँदलाला ॥ १ ॥ तब ऐसे बोली ब्रज बाला । अब नहिं वे हैं री गोपाला ॥ कहँ मुरली मुख बजत रसाला । वरही मुकुट कहाँ बन माला ॥ २ ॥ तन बन धातु न चित्रित कारी । कहँ वह काँधे कामरि कारी ॥ लागत लाज लखत अब ग्वाला । भये द्वारका जाय भुआला ॥ ३ ॥ सोरह सहस वरी नृप बारी । कत पूछिहिं अब ग्वारि गँवारी ॥ कह बावत यादव कुल नन्दन । छोरत हैं भूपति के वन्दन ॥ ४ ॥ नृप किरीट माथे पर छाजे । उर मणि गण गुण हार विराजे ॥ यह सुनि के राधा मुसकाई । पाय पटोलन की सुधि आई ॥ ५ ॥ गुंजमाल हित फिरत कन्हाई । माँगत सो सो हा हा खाई ॥ केतिक राज तिलक किन होहू । पै नहिं हरि बिसरहिं ब्रज छोहू ॥ ६ ॥ कोटिक वरहि न राज कुमारी मेरी उन की बातहि न्यारी ॥ वारि चरहि वारी मन भावत । पै परसत सो मन अकुलावत ॥ ७ ॥ नाना वस्तु धरहु वरु लाई । सेवक चिमटत लोहहिं जाई वे नहिं मानहिं रंक उदारा । श्यामहिं केवल प्रेम

(पियारा)

पियारा॥ ८॥हरि गुण सुमिरि मगन मन प्यारी।
तैसहि मुदित सकल व्रज नारी॥ कोऊ कहत जु अ-
बहीं पाऊं। मन मोहन कों कराठ लगाऊं॥ ९॥बहुरि
द्वारका जान न पावैं। सब मिलि कै व्रजही लै जावैं
इक सखितहि विनवत मनं माहीं। अब धौं हरि बोल-
हिं की नाहीं॥१०॥इक कहु जो मो तन मुसुकावैं।तौ
निज जन्म सुफल करि पावैं॥ अपर कहत इक उरह-
न देहौं।दांव कूबरी को अब लेहौं॥११॥एक कहत
आवन तौ देऊ। को जानै खेजन के भेऊ॥ ऐसे सबह-
रि मैं मन दीन्हें।निज निज उक्ति मनोरथ कीन्हे॥१२
अति आनँद नहि जात बखानी। मनहुं सिखी सुनि
वारिद बानी॥व्रज बासी जन के यों हाला। गाय ब-
च्छ सब गोपी ग्वाला॥१३॥जिन्ह गैयन गोपाल च-
राई। तिन की दशा बरणि नहिं जाई॥ श्याम विरह
सों रहीं भुराई। चरत नहीं तृण उदर अघाई॥१४॥
हस्त कमल की सब प्रतिपाली। तिन के मन छाए
बनमाली॥ सुनि हरि नाम सकल अनुरागीं। अन-
ण उठाय प्रेम रस पागीं॥१५॥ पशु के प्रेम जहां अ-
स गावैं। नर नारिन के कौन चलावैं॥ ऐसे सब व्रज
जन मन फूले। हरि आगम सुनि सब सुधि भूले॥१६
दोहा॥सो यादव आतुर कह्यो। द्वारपाल कहं जाय।

व्रज जन सब आये इहाँ। हरि को देहु जनाय॥ १॥ द्वा-
रपाल सुनि तुरत यह। भेजी खबर पठाय॥ नन्दादि-
क नर नारि सब। व्रज के उतरे आय॥ २॥ व्रजवासि-
न के नाम सुनि। बिवस भये घनश्याम॥ प्रेम अंबु
अंबुधि उमगि। लोचन ललित ललाम॥ ३॥ पुलकि-
त तन कंपित वदन वचन न सकत सँभार॥ सुपन
कि धौं है सत्य यह। परत नहीं पतियार॥ ४॥ रहे च-
कित तित ध्यान धरि। उर साल्यौ सो ठाम॥ त्रिभुव-
न सुख पावत नहीं। नन्द धाम बिश्राम॥ ५॥ अब
वह कब शिशु छबि धरहूं। जो पाऊं ब्रज वास॥ कौन
भाँति व्रज जनन के। पूजिय मन की आस॥ ६॥ भये
जलज लोचन अरुण। मोचत जल अति धार॥ बि-
सरि गई सब सुधि हरिहि। तनहू की न सँभार॥ ७॥
श्री वसुदेव देवकी । यह सुनि आये धाय॥ देखि
रहे हरि की दशा। धनि धनि कह्यो सुनाय॥ ८॥ चौ-
पाई॥ असुवन पोछति अंचर माता। थँभत नहीं।
दोउ दृग जल जाता॥ भिंजे वसन उर स्वास न भावै।
नर चरित्र सब प्रगट दिखावै॥ १॥ भव जल निधि
के शोषन हारे। नयन नीर नहिं सकत सम्हारे॥ ग-
हि गहि कर जननी समुझावै। हरष समय कतहीं
दुख पावै॥ २॥ कहत देवकी अब मैं जानी। मन की

बात आजु प्रगटानी ॥ जब तबही तू रहत उदासा । कछु सुनि सुनि मन लेत उसासा ॥ ३ ॥ सो तव बात जानि नहिं गयऊ । आज मनोरथ पूरण भयऊ ॥ ऐसे मुदित देवकी माई । बड़े भाग आये सुखदाई ॥ ४ ॥ बहुत जनन कह देइ बधाई । कहत धन्य दिन आजु सुहाई ॥ प्रथम आय जिन खबर जनाई । मन भावती बस्तु तिन पाई ॥ ५ ॥ अति अनन्द वसुदेव मुदित मन कहत धन्य यह घड़ी दिवस छिन ॥ सुनहु लाल प्यारे घनश्यामा । भये तुम्हारे पूरण कामा ॥ ६ ॥ नन्द बबा अरु यशुदा माई । आय मिले यह अति मन भाई ॥ या सम हरष न दूजो तुम को । चाहिय कछुक बधाई हम को ॥ ७ ॥ पितु के वचन सुनत सुखदानी । बोले करुणानिधि मृदुबानी ॥ जैसो हरष भयो यह हम को । कहा बधाई दीजिय तुम को ॥ ८ ॥ त्रिभुवन वैकुंठादिक माहीं । या के योग बधाई नाहीं ॥ व्रज बासी अति मोको प्यारे । उन के ऊपर तन मन वारे ॥ ९ ॥ सो यह बस्तु तुम्हारोइ ताता । जानत सब जग में विख्याता ॥ कहा बधाई तुम को दीजे । यह अपराध क्षमा प्रभु कीजे ॥ १० ॥ सुनि सुत वचन परम सुख पायो । धन्य धन्य कहि प्रभुहि सुनायो ॥ बड़े भाग ऐसे सुत पाये । पूरब पुण्य उदय ह्वै आये ॥ ११ ॥ पुनि पुनि

निजहिं कहत बड़ भागी। ब्रह्म भयो नर तन जिहिं। लागी॥ धन्य यशोदा धनि नँदराई। शिशु पन सुत करि गोद खिलाई॥ २२॥ अबलौं गुण गावत हौ। सोई। तुम सम जग सुशील नहिं कोई॥ पूरण नेह निबाहन हारे। भक्तन ते कबहूँ नहिं न्यारे॥ २३॥ बहु विधि करि वसुदेव बड़ाई। प्रेम मगन उर हरष न-माई॥ ऐसे अति मन मोद बढ़ाए। सानँद पुनि निज ठाम सिधाए॥ २४॥ तब इक सखि रनिवासहि जाई रानिन प्रति सब बात जनाई॥ आजु कहा जानी न-हिं जाई। रोवत हैं अतिहीं यदुराई॥ २५॥ यह सुनि सब रानी उठि धाई। रुकमिणि आदि तहाँ चलि आ-ईं॥ हरि हग सन निज बदन दुराई। देवै के ढिग बैठीं। आई॥ २६॥ दोहा॥ मधुर बचन रुकमिणि कहत। श्री देवकिहि सुनाय॥ आजु कहा जानि न परत। रो-वत हैं यदुराय॥ १॥ कहत देवकी आजु भय पूरण। मन के काम॥ नन्द यशोदा गोप गण सब आये इहि ठाम॥ २॥ तिन के आगम सुनत इहि। रह्यो न कछु संभार॥ उमगि प्रेम आनन्द उर। हगन चली बहि। धार॥ ३॥ वे याको सुख बहु दियो। शिशु पन लाड़ लड़ाय॥ तिन के गुण कहि जात नहिं। कीन्ही बड़ी सहाय॥ ४॥ लालन को पालन कियो। हित करि

निज सुत जानि ॥ द्वादश वरष रह्यौ तहाँ। बालकेलि रस ठानि ॥ ५ ॥ इतो तबहि अति अचगरी। दुरत काहू से नाहिं ॥ महर महरि के दृगन दुरि। निकसि सदन सो जाहिं ॥ ६ ॥ रोकत टोकत युवति मग। लुभयो गोपिन माहिं ॥ बन बनि तन के सँग फिरत। वे मोहित इन पाहिं ॥ ७ ॥ अजहूं लों बिसरत नहीं। रहत उनहिं में प्रान ॥ नन्द यशोमति गोपि जन। सदा हृदय व्रज ध्यान ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ सुनि कै मन विहँसीं सब रानी। यह तो बात आजु हम जानी ॥ कहत परस्पर सब मुसुकाई। वेई व्रज क्रीड़ा सुधि आई ॥ १ ॥ श्री रुकमिणी मोर सब ती की। जानन हार पीय के जी की ॥ अति मन हरषि कहत मृदु वानी। धन्य धन्य आपुन को जानी ॥ २ ॥ व्रज बासी मम भाग न आये। सुफल फले सब मन के भाये ॥ धन्य नन्द धनि यशुमति माई। जिन के गुण गावत समुदाई ॥ ३ ॥ धन्य धन्य श्री राधा प्यारी। धन्य सकल व्रज गोप कुमारी ॥ जिन के हृदय बसत घनश्यामा। नरवर भेष धरे अठ यामा ॥ ४ ॥ मन वच करि हरि उनके वल्लभ। तिन के दरश हमहिं अति दुर्लभ ॥ श्री मुख हू यह वचन उचारे। व्रज बासी मो कों अति प्यारे ५ पुनि पुनि मो मन ऐसी आवैं। करिय सोई जो श्यामहि

भावै ॥ हरि को ब्रजजन मैं लै जैये । सब विधि मन के
साध पुजैये ॥ ६ ॥ सुनि रुकमिणि की अमृत बानी ।
यदुंपति अति मन में सुख मानी ॥ यह सुनि कै आ-
ई सतभामा । कुटिल चातुरी गरब कि धामा ॥ ७ ॥
बड़े नृपति की सुता कहावै । काहू को चित में नहिं
लावै ॥ मुख चमकाय चढ़ाइ त्योरी । हरि मुख ल-
गी अतिहि लड़ बौरी ॥ ८ ॥ चिबुक लाय कर पुनि
मुसकाई । करत ठठोली हरिहि सुनाई ॥ अब काहे
मन करत उदासी । मुदित होउ आये ब्रज बासी ॥ ९
वेई सखा संग के ग्वाला । अरु वेई आई ब्रज बाला ।
राधाहू संग आई ह्वै हैं । तुम्हरो दरश देखि सुख पै-
हैं ॥ १० ॥ तुमहूं धरो नटवर छवि सोई । वेई तुम अरु
वेई कोई ॥ यह सब नृप शृंगार उतारो । वैसहि मोर
मुकुट शिर धारो ॥ ११ ॥ वैसहि काहि न चीतहु गात
नीके घसि घसि बन के धाता ॥ गुंजा गुथि पहिरो
तन माहीं । मिलहु सखन दै दै गरबाहीं ॥ १२ ॥ वैस-
हि माखन जाय चुरावहु । रही साध तब अब सु पु-
रावहु ॥ तारी दै दै कूदहु गावहु । बन बन तिन संग
धेनु चरावहु ॥ १३ ॥ काछनी काछि धरि कमरी कांधे
बंशी फूँकि बुलावहु राधे ॥ औरहु संग लेहु ब्रज भा-
मिनि । रचहु रास किन आजुहि यामिनि ॥ १४ ॥

कैसे नाचत हौ तिन साथा। जोरि जोरि गोपिन ते हाथा॥ सो करि कृपा हमहिं दिखैये। नयनन को फल हमहूं पैये॥ १५॥ सुनि हरि सतभामा की ताने सजल नयन कछु सुख मुसकाने॥ मन मन जानत करत ठठोली। समय पाय इन चित की खोली॥१६

दोहा॥ विहँसि चले यदुराय तब। महल बाहिरे आ-य॥कह्यौ जनावहु खबर यह दाऊ जू प्रति जाय॥ १

व्रज वासी नर नारि अरु। नन्द यशोमति माय॥ ग्रहण न्हान के हित सकल। उतरे हैं इत आय॥२॥ब-ल कहु खबर पठाय उत। जहँ व्रज जन समुदाय॥प-द पंकज-पावड़ि रहित। आप चले तहँ धाय॥३॥

भूप भीर खर भर परे। बहु जन उमड़े आय॥ जकि थकि सब कौतुक निरखि। अति मन अचरज पाय॥४

सुन्यौ यशोदा नन्द यह। आवत हैं सुखदाय॥ मन अनन्द तन सुधि बिसरि। रहे बारि दृग लाय॥५॥म-च्यौ शोर व्रज जनन में आवत नन्दकिशोर॥ मुदित गोप निज निज भजत। भूषण ठौर कुठौर॥ ६॥इक इक पट खैंचत युगल। कोउ न काहु सँभार॥ ठाढ़े बाँधत पाग शिर। झुकि झुकि झाँकत द्वार॥७॥

तिहि मग देख्यौ दूरि तें। आवत श्री नँद नन्द॥ व्र-ज जन फूले कुमुद बन। मनहुं उदित भये चन्द॥ ८॥

चौपाई ॥ यशुमति रही निहार चकीलो। मन अकु-
लात न भेद सकीलो ॥ भई भीर गोपन की भारी। अ-
गणित तहाँ जुरे नर नारी ॥ १ ॥ धाय धाय आवतहैं
ग्वाला। भरि भरि भुज भेटत गोपाला ॥ सो छविक-
छु वरणत नहिं आवै। शत रति पति की दुतिहि ल-
जावै ॥ २ ॥ अति सुन्दर तन श्याम तमाला। उदरपा-
न छवि भुजा विशाला ॥ दुति मराडल कुराडल श्रु-
ति सोहै। रतन जटित देखत मन मोहै ॥ ३ ॥ कराठ
कपोल चिवुक छवि न्यारे। शुक नासिका अधर अ-
रु नारे ॥ दृग गति अति खंजनहिं लजाए। भ्रूधनु
मनहुं मनोज चढ़ाए ॥ ४ ॥ शीस किरीट चारु छवि
जाला। उर सोहत मुक्ता मणि माला ॥ गोपन मध्य
लसत सुख कन्दा। उर गण में जिमि पूरणचन्दा ॥
५ ॥ कोउ आगे कोउ भेटत पीछे। कोऊ अंकम लेत
निरीछे ॥ कोऊ आय पाय पर परहीं। तन मन धन
निवछावरि करहीं ॥ ६ ॥ नटवर रूपहि गोप लुभाने
नृपके साज सु मनहिं न माने ॥ लेत उतारि मुक्त म-
णि माला। गुंजमाल पहिरावत ग्वाला ॥ ७ ॥ एक
नजर अम्बर लै लीन्हें। काँधे पर कामरि धै दीन्हें ॥ इ-
क ले मोर पंख शिर धारे। मन में नेकु न शंक विचारे
८ ॥ प्रीति रीति लखि हरि सुख पावैं। तन के मन की

(प्रेम)

साथ सुरावैं॥देखिदेखि यदुवरश्री रीझैं। कोउ सशंक ह्वै मन में खीझैं॥ ९॥ कोउ अपने मनमें अभिलाखैं कोऊ तिन के भामिन भाखैं॥ ज्यों ज्यों मोहन आवत नेरे। त्यों त्यों लेत गोप अति घेरे॥ १०॥ चकृत श्याम काल्यो कह मैया। तबहि यशोमति लख्यो कन्हैया। सपदि परे चरणन पर जाई। दृग जल पद दीन्हे पखरा-ई॥ ११॥ जाके पद मुनिजन मन ध्यावैं। शंभु नहीं उर ते बिसरावैं॥ जा पद रेणु परसि ऋषि नारी। शिला वि-मोचि दिव्य तन धारी॥ १२॥ जा पद पदुम इन्दिरा हाथा। प्रगटी सरिता पावन पाथा॥ जा के पद ब्रह्मा दिन पावैं सो यशुमति पद शीस नवावै॥ १३॥ कर गहि माता उर लपटायो। कठिन विरह की ताप नशायो॥ लाय र-ही छतियन ते माता। पुनि पुनि चूंब बदन जल जाता १४॥ मुख मूछन की रेख सुहाई। देखि देखि जननी ब-लि जाई॥ मोंको यह सुख दुर्लभ भारी। मो समान को आजु सुखारी॥ १५॥ लखि लखि यशुमति तन सुख दानी। दृग सरोज भरि डारत पानी॥ बारे पन की सब सुधि आई। जैसे कनिया बैठत जाई॥ १६॥ दोहा

दृग जल पोछति मातु कर। लिये बहुरि उर लाय॥ तु-म जनि रोवहु प्राण धन। जननी बलि बलि जा-य॥ १॥ तन नृप भूषण बसन लखि। मातु अंग नहिं

माय ॥ बिसरि गयो सब बिरह दुख । मनु ऐसेहि सदा-
य ॥ २ ॥ इहि बिधि जननिहि भेटि प्रभु । मेटि सकल
दुख दुन्द ॥ बहुरि रहत हे नन्द जहँ । तहँ आये सु-
ख कन्द ॥ ३ ॥ दूरहि तें देखत हरिहि । बिवस भये अ-
ति नन्द ॥ आकुल लोटत धरणि पर । फँसे मोह के
फन्द ॥ ४ ॥ कबहूँ आवत सुधि कबहुँ । मुरछत शिथि-
ल उछाह ॥ स्रवत स्वेद पर हरत तन । उमग्यो प्रेम प्र-
बाह ॥ ५ ॥ परे जाय प्रभु पाय पर । लीन्हो हृदय लगा-
य ॥ कहा कहौं तिहि समय की । दशा बरणि नहिं ।
जाय ॥ ६ ॥ ग्रीवा गहि हरि नन्द की रोवत धरत न चेत
भक्तन हित नाना चरित । ठानत कृपा निकेत ॥ ७ ॥
नँद नँद नन्दन मिलन लखि । धरत न काहू धीर ॥ इ-
क पछरत इक गिरत महि । इक छिरकत मुख नीर
८ ॥ चौपाई ॥ एक कहत चेतहु मन माहीं । जीवन
दिन कत मरत वृथाहीं ॥ चितवत एक निमेष बि-
सारे । एकन तन की सुरति सम्हारे ॥ १ ॥ इक अति ।
चकृत कहे कह कीजे । एक कहत जीवन फल ली-
जे ॥ हम सम किहि जग आजु अनन्दा । बहु दिन पै
देख्यो मुख चन्दा ॥ २ ॥ एक कहत धनि आजु घरी-
छिन । एक कहत कुरुक्षेत्रहि धनि धन ॥ इक उत
जात एक इत आवे । इक आतुर मारग नहिं पावै ॥ ३

भीरहि में भामिनि धसि जाहीं। लाज शंक सब तजि मन माहीं॥ कोउ सलज्ज दूरिहिं तें दरसैं। कोऊ निकट जाय पद परसैं॥ ४॥ एक कहत कछु सखी आली। देखन देहु नेकु बनमाली॥ एक खड़ी तहँ लज्जा थोरी। हम को हरि देखैं रहे कोरी॥ ५॥ लाज हमारो काज बिगास्यो। हाहा हम नहिं श्याम निहास्यो॥ बदत होड़ तिय आपस माहीं। इक लखि आवत एक न जाहीं॥ ६॥ इक कह कब की देखि रही री। अब तो मेरी बार भई री। सो कहहीं तो अबहीं आई। देख्यो नाहीं नन्द दुहाई॥ ७॥ एक कहत हम पायन परहीं। इक कर जोरि निहोरन करहीं॥ हौं चलिहौं सखि तेरे गोहन। मोहिं दिखैं हवेरी अब मोहन॥ ८॥ एक कहत आवहु मम साथा। हौं तुहि दिखैरे हौं ब्रज नाथा॥ तिन में जे हरि जू की प्यारी। षट दश सहस गोपिका न्यारी॥ ९॥ जिन मन मोह रसिक बिहारी। बंक बिलोकन जादू डारी॥ बंशीवट कीन्ही ब्रज बाला। मृदु मुसुकाय ठगी नँदलाला॥ १०॥ लोक लाज तृण सम करि जान्यो। सरबस धन मन मोहन मान्यो॥ तिन की दशा वरणि नहिं जाई। बिरह बिबस तन सुधि बिसराई॥ ११॥ चलीं यूथ करि मिलि सब तिन में। मिलत जात अरु युवती जिन में॥ नख बदन धरणिहि हग लाई। हिरदे भीतर बसत कन्हाई

१२॥ जाय परीं चरणान अति आतुरातिन में ललिता जू अति चातुर॥ विरह विथा जनकी उर खुटकी। परस त पाय लई भर चुटकी॥१३॥ लज्जावस बोलत कछु नाहीं। धस्यो भाल दोउ चरणान माहीं॥ तैसेही चंद्राव लि आई। आय पाय पर शीस नवाई॥१४॥ अति बिहा ल कछु सुधि नहिं ताहीं। दशन काटि लीन्हे पद माहीं पुनि तरवा चाट्यो रदलाई। निरखि प्रीति प्रभु मन सु ख पाई॥१५॥ राधाकी गति कहत न आवे। विरह अ नल कंचन तन तावे॥ हरिहि विलोकि नयन जल बाढ़ो कंपत अति आतुर दुख दाढ़ो॥१६॥ दोहा॥ नीलाम्बर दुखवत बदन। सकुचत अतिहि सशंक॥ मनहुं घनांत र लसत छबि षोड़श कला मयंक॥१॥ प्रीति पुरातन सुधि भई। निरखि श्याम सुख रास॥ चित्र लिखी सी ह्वै रही। भरि भरि लेत उसास॥२॥ ठाढ़ी हरि ढिग युव ति सखि। बोलि सकत कछु नाहिं॥ बहत दृगन जल धार दोउ। परत श्याम पद माहिं॥३॥ मनमोहन चकृत मनहिं। कौन तीय यह आहि॥ श्रवत नयन ते उष्ण जल इतो तपत कर आहि॥४॥ तबहीं पद परसत दृगनि बर ष्यो शीतल मेह॥ रसिक शिरोमणि साँवरे। जान्यो राधा स्नेह॥५॥ अति तलफत बिलपत विकल। दुरि दु रि लेत बलाय॥ छुइ छुइ कर पंकज चरण। नयन निरहत

लगाय ॥ ६ ॥ नाय रही पुनि पाय शिर। बिसरि लोक की लाज ॥ प्यारी की यह लखि दशा। बिबस भये ब्रज राज ॥ ७ ॥ कबहुं प्रियहि निरखत प्रगट। निमिषि टारि बल बन्धु ॥ कबहूं उर धरि ध्यान मन मगन होत सुख सिन्धु ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ ऐसे प्रेम फन्द के माहीं। फँसे युगल छूटत हैं नाहीं ॥ कुँवरि जननि इत उत बिल लावैं। ढूंढत कतहुं खोज नहिं पावैं ॥ १ ॥ सखी संग की मिलि मिलि आई। राधा कहँ धौं रही भुलाई ॥ तबही पाये मोहन पाहीं। परी बिकल कछु सुधि नहिं ताहीं ॥ २ ॥ ज्यों त्यों पकरि किनारे ल्याई। करि पट ओट तहाँ पौढ़ाई ॥ कर पद पटकत चेतन राई ॥ बहुत भाँति सखियन समुझाई ॥ ३ ॥ कौन सुनै समुझै किहि बाता। श्रवत प्रसेद शिथिल सब गाता ॥ मोहिं लियो मन मदन गुपाला ॥ राधा जू के हाल बिहाला ॥ ४ ॥ श्याम मिलत कह इहि गति सोई। कोउ कह रुज कछु भाषत कोई। नाक मूँदि इक मुख जल डारे। इक फूँकत कछु पढ़ि पढ़ि झारे ॥ ५ ॥ पैठ्यो अन्तर देव मुरारी। सो क्यों छूटहि कौतुक कारी ॥ कछुक बार बीते सुधि आई। हिलकी लागी स्वासन माई ॥ ६ ॥ यह लखि सब मन धीरज आयो ॥ जान्यो श्याम बिरह उरछायो ॥ पुनि अलि मिलि समुझावन लागी। तू तो निपट लाज री त्यागी ॥ ७ ॥

जननी हरि पद ढिग ते लाई। तो को नेकहु चेतन माई॥
जब यह उरहन सखिन सुनाई। तब घूँघट करि अति-
हिं लजाई॥८॥ ह्वै सचेत हरि रही निहारी। तहाँ भीर
नारिन की भारी॥ जे लाँबी ते लखि सुख पावैं। छोटी
अति मन में पछितावैं॥९॥ कत हम नाहीं भई विधाता
निरखि न सकत नन्द को ताता॥ तिनहिं कहत तुम।
तो हरि देखे। ब्रज में निज संगी करि लेखे॥१०॥ हम
हूं को अब नेकु दिखावो। तौ यह सुयश बड़ो तुम पा-
वो॥ इक तिय कटि गहि ताहि उचावै। सुन्दर श्याम
निरखि सुख पावै॥११॥ एक कहति धनि भाग हमा-
रे। हम देखे नँद नन्दन प्यारे॥ इक मन मुदित प्रफुल्लि-
त डोलै। जोइ आवत सोइ सुख ते बोलै॥१२॥ इक
कह हौं अबहीं मिलि आई। हरि को नेकहु मान नसा-
ई॥ प्रथमहिं सबन कहे धौं कैसे। अब नाहीं हैं गिरिध-
र वैसे॥१३॥ भये जाय राजन के राजा। बोलत हैं नाहीं
बेकाजा॥ सो इक सुख कहु करहुँ बड़ाई। मनु ब्रजही
में बसत कन्हाई॥१४॥ इक कह मानहुं धेनु चराये। वृ-
न्दावन तें अबहीं आये॥ नटवर वेष रहित सब सोहैं।
वैसहिं वचन विहँसि मन मोहैं॥१५॥ भूपति भूषण
अँगवर भ्राजे। लगत चारु छवि छवि को लाजे॥ पर-
हु छार मम अँखियन माहीं। कछुक अधिक सुख देख

(मुहाहीं)

सुहाहीं॥२६॥दोहा॥ऐसे मिलि सब कम्म तें। भये सु
दित नर बाम॥ कहत धन्य धनि आजु हम नयनन दे-
खे श्याम॥१॥यह लखि ब्रज सुरभी सकल। अतिहिं
उठीं अकुलाय॥ प्रेम डोर खैंची विवस। चलीं श्याम
ढिग आय॥२॥मन मन अति पछतात हम। कतहिं
भये पशु योन॥ मिले सकल ब्रज जनहिं हरि हम को
पूछहि कोन॥३॥हे मन मोहन श्याम घन। कुंज वि-
हारीलाल॥ वचन हीन हम दीन पशु। जानि तजी
गोपाल॥४॥इत उत चमकत चकित चित चितवत
अवरा उठाय॥ हरि के दशा लखत सकल। गईं धेनु
मचलाय॥५॥गैयन की गति श्याम लखि। लीन्ही
भरि अकवारि॥ झुकि झुकि हेरत बदन तन। फेरत
हाथ मुरारि॥६॥देखि दूसरी मात अति। भरि आये
दोउ नयन॥ पोंछत रज निज अंचरन। संतोयत मृदु व-
यन॥७॥यह धौरी कजरी सुता। यह खुली की तोहिं
यह धूमरि खंजन नयनि। अति सुख दीन्हे मोहिं॥८॥
चौपाई॥इहि विधि हरि सब हिन तें भेंटे। विरह ताप
ब्रज जन के मेटे॥ जाके मनहीं ऐसी भावन। तैसहि
ताहि मिले मन भावन॥१॥कहलों हरि के मिलन ब-
तावें। अति कुटुम्ब वरणत नहिं आवें॥ बहु जन आव-
त बिनहीं नाते। मिलि मिलि जात प्रेम मद माते॥२॥

कौतुक निरखि बिबुध मन हरषत। पुनि पुनि कुसुमांजुलि भरि बरषत॥ कहत धन्य गो गोपी ग्वाला। प्रीति सहित जिन मिलत कृपाला॥ ३॥ छये गगन सुर लोक भुलाने। धनि धनि कहि ब्रज जनन बखाने॥ ऐसेहीं भेंटे बलरामा। जेहि विधि सबन मिले घनश्यामा॥ ४॥ प्रथम नन्द यशुमति से जाई। मिले श्यामही लौं बलि भाई॥ ब्रज जन सखा संगि तें वैसहिं। पुनि युवतिन ते भेंटे तैसहिं॥ ५॥ दाऊ के गुण अति गंभीरा। नीलाम्बर वर गौर शरीरा॥ सब विधि सबहिन को सुख दीन्हे। पूरण सकल मनोरथ कीन्हे॥ ६॥ चन्द्र वदन दोउ वीर निहारी। चित चकोर ब्रज जन बलिहारी॥ कहत नन्द यशुमति सुत प्यारे। अब हम तें मति होउ नियारे॥ ७॥ बिछुरत मरि जैहै पितु मैया। विरध समय जनि तजहु कन्हैया॥ अवधि लागि हैं प्राण हमारे। अब नहिं तजिहैं शरण तुम्हारे॥ ८॥ सुनत नंद यशुमति की बाता मनही मन बिहँसत जगत्राता॥ अति अभेद कोउ भेद न पाया। प्रभु प्रेरित जग व्यापक माया॥ ९॥ अखिल अनादि नित्य सुख रासी। रोम रोम ब्रह्मांड विलासी॥ मिलन मुदित मन विरह बिहाला। यह सब श्याम सज्यो नट ख्याला॥ १०॥ मन मुसकाय कह्यो सुख सिंधू। दीनदयाल विश्व के बंधू॥

जनि डरपहु अपने मन माहीं। अब वह व्यथा व्यापिहै नाहीं॥२१॥रहिहौं तुम्हरे निकट सदाई। यों कहि हरि वे बात भुलाई॥ सुनि मोहन के वचन रसाला। मुदित भये सब गोपी ग्वाला॥२२॥बिसरि गई वे व्रज की बाता। प्रमुदित निरखि मनोहर गाता॥ तिहि क्षण सकल । साँवरी आई। तब कर जोरि कह्यो दुहु भाई॥२३॥ अमिय वचन बोलत व्रज नाथा। चलिय सदन सब करिय सनाथा॥ यह सुनि सब व्रज जन हरषाने। चले सकल । आनँद रस साने॥२४॥खास सवारिन नन्द यशोदा। जिन नित हरिहि खिलाए गोदा॥ तैसीहीं प्यारी को आई। चढ़ी मुदित उर राखि कन्हाई॥२५॥ छत्रपती गति चली सवारी। कौतुक लखत जुरे नर नारी॥ जे जन मग में भीर लगावैं। तिन को छरीदार बिलगावैं॥२६ दोहा॥ राव रंक कोउ गनत नहिं। सब बिलगावत जात रतन जरी कंचन छरी। परी सकल के गात॥१॥ प्यादे अश्व सवार वर। अरु आसे बरदार॥ चोपदार अगशित चले। करत नकीव पुकार॥२॥ यों व्रज जन । ल्याये भवन। सुनि सबहिन उतराय॥ उतराये व्रज युवति जन पट अन्तर करवाय॥३॥ कह्यो सबनि कोउ इनहिं जनि। रोकहु टोकहु जात॥ सुनि त्यों त्यों व्रज जन मुदित। फूले गात न मात॥४॥ ठाम ठाम नाना

विविधि। दिये बिछौन बिछाय॥ सब ब्रज बासिन को तहाँ। मोहन राखे जाय॥ ५॥ यशुमति गोपिन मिलन हित। अबहीं फुरहि पठाय॥ नन्दहि संग वसुदेव दिग। ले आये यदुराय॥ ६॥ देखि मिले वसुदेव उठि मित्र मित्र कहि धाय॥ लिये नन्दहू लाय उर छये दृगन जल आय॥ ७॥ तबहि नन्द कर जोरि युग। कहत सुनहु महराज॥ धन्य धन्य धनि भाग हम। देखे चरणन आज॥ ८॥ चौपाई॥ कह वसुदेव सुनहु नँदराई। कहँ लगि तुम्हरी करहुं बड़ाई॥ तुम से मित्र भाग्य तें पायो। पै हम ते कछु नहिं ह्वै आयो॥ १॥ तुम ते उऋण होत हम नाहीं। कैसेहु जनम जनम के माहीं॥ हरि हलधर तुम हमको दीन्हे। सब विधि कृत्य कृत्य मोहिं कीन्हे॥ २॥ तुम पसाय यह नव निधि पाई। तुमहीं दीन्हे भई बड़ाई॥ नेह निबाह करी तुम पूरी। त्रिभुवन में यह यश भइ भूरी॥ ३ कंस असुर ते वंश बचायो। तुम्हरो गुण कछु जात न गायो॥ यों वसुदेव नन्द परितोषे। बहु भाँतिन सनमानि संतोषे॥ ४॥ ऐसेहि देखि देवकी माई। यशुमति को भेंटी उठि धाई॥ कहत आजु बड़ भाग हमारे। नयननि निरखे दरश तुम्हारे॥ ५॥ मथुराहूं देख्यो नहिं कबहूं। अति मनहीं अभिलाषा तबहूं॥ यशुमति को उर उमड़्यो भारी। नयननि जल नहिं सकत सम्हारी॥ ६॥

कहत देवकी सुनहु यशोमति। तुम निज मन गलान
आनहु मति ॥ काहे को चित करत उदासा। रहति स-
दा किन हरि के पासा ॥७॥ श्याम राम तुम्हरे सुत दोऊ
अहनिशि तुम गुण गावत वोऊ ॥ मन करि हरि व्रज
माहिं बसत हैं। देह धारि मुनि इहाँ लसत हैं ॥८॥ कह
यशुमति सुनि देवै माई। हौं हरि को रहि हौं है धाई ॥
मंजु कंज मुख लखि सुख पैहौं। कोटि करहु अब व्रज
नहिं जैहौं ॥९॥ गोपी परीं देवकी चरणन। कहा कहौं
ता छवि को वरणन ॥ वेणी सोहत पीठ ललामा। मनु
रवि अहि को करत प्रणामा ॥१०॥ प्यारी जब परस्यो प-
द आई। देवै गहि तब हृदय लगाई ॥ बदन बसन कर तें
बिलगाई। रूप देखि मन माह सिहाई ॥११॥ चंपक व-
रण नयन रतनारे। कोटि काम या छवि पर वारे ॥ मु-
ख दुति देखत शशि अभिलाखे। जननी धन्य उदर नि-
ज राखे ॥१२॥ सुनत रहे हे जिती बड़ाई। तातें हूं देखी।
अधिकाई ॥ सब बधु वन ते रूप उजागर। नीलासी अ-
ति लखियत नागर ॥१३॥ कैसे श्याम तजी यह रा-
धा। रूप राशि छवि अगम अगाधा ॥ मनहीं मन रा-
धा मुसुकाई। घूँघट शोभा वरणि न जाई ॥१४॥ बि-
हँसत खरे श्याम सुख देना। प्यारिहि लखत तिरीछे
नयना ॥ देवै हूं सब बधू बुलाई। यशुमति पाय परी

پریم رتن ۳۴

सब आई ॥२५॥ दै अशीश पुनि उर तें लाई। मुदित निर-
खि सुख लेत बलाई॥ कहत उयो बासव यह नीको।
सुफल फल्यो सब मेरे जी को॥२६॥ दोहा॥ तब रुक-
मिणि कर जोरि कह। यदुनन्दन प्रति आय॥ मो मन
अभिलाषा करिय। राधा की पहुनाय॥१॥ सुनि स-
प्रीति रुकमिणि वचन। कह्यो श्याम अभिराम॥ लै-
जावहु किन धाम निज पुरवहु मो मन काम॥२॥ प्या-
री मूरत प्रेम की मन वच मम अनुरक्त॥ जो या को से-
वन करहिं पावहिं मेरी भक्त॥३॥ यह सुनि रुकमि-
णि मुदित अति। गई राधिका पाहिं॥ सखिन सहि-
त निज संग लै। आई मन्दिर माहिं॥४॥ राधा रुकमि-
णि दोउ मिलीं। शोभा बरणि न जाय॥ पुनि भेटी गो-
पीन तें उर आनँद न समाय॥५॥ तब रुकमिणि मन की
कहत। द्वारावति की बात॥ जैसे हरि ब्रजजनन की।
भजत रहे दिन रात॥६॥ कबहूं ब्रज चरचा करत प्रेम।
मगन ह्वै जाहिं॥ ऐसे रुकमिणि मुदित मन गोपी म-
ण्डल माहिं॥७॥ तिहि क्षण आये श्याम तहँ हृदय
न हर्ष समाय॥ जहँ बैठी राधा कुँवरि हरि बैठे ढिग जा-
य॥८॥ चौपाई॥ यह सुनि कै रानी सब आई। सतभा-
मादि भामिनी धाई॥ चलहु लखन अहिरन की पाँ-
ती। जिन को हरि मानत बहु भाँती॥१॥ सब के मन

(अभिलाषा)

अभिलाषा भारी। हम को श्याम देखावड़ प्यारी॥ ए-
कहि रूप सकल ब्रज गोरी। इन में को वृषभान किशो-
री॥२॥ भामा कहत बतावत नाहीं। लहत बड़ाई कछु
या माहीं॥ हँसत श्याम अति बिहँसत प्यारी। मन मन
कहत ढीठ यह नारी॥३॥ मारुत बल घूँघट फहरावै
सो कछु शोभा बरणि न आवै॥ नीलाम्बर में सोहत
कैसी। मनु घन मध्य तड़ित छवि जैसी॥४॥ तबही
सतभामा पहिचानी। रूप अनूपम निरखि सिहानी
मन मन कहत कहा विधि कीन्ही॥ इतनो रूप अहीर-
न दीन्ही॥५॥ ठौर कुठौर विचारत नाहीं। सठ न देत
नृप घरणिन माहीं॥ नेक झलक लखि भइ गति ऐ-
सी। नीके निरखत ह्वैहै कैसी॥६॥ तबहि श्याम घन
मन की जानी। हँसि घूँघट खोले निज पानी॥ ज्यों इ-
न्दु बादरहि बिदारी। जब नीलाम्बर मुख तें टारी॥७॥
तीन भुवन की सुन्दरताई। श्री राधा के वदन सुभाई॥
सतभामादि निरखि सब रानी। कछु मुरझाय बहुरि
सकुचानी॥८॥ श्याम सबन को गरब नशायो। श्या-
मा के मन हरष बढ़ायो॥ तब श्री यदुनन्दन सुखदाई
सब रानिन के मन की पाई॥९॥ एक बात भाषत मैं
नीकी। सुनहु सकल यह तुम्हरे जी की॥ नाना विधि
रोना जग माहीं। ता काहू के वश में नाहीं॥१०॥ सों

को बस जो चाहै कीनो। टोनो आयो एक नवीनो॥ सु-
नत सकल चकृत मन माहीं। भामा कहत कहत कत
नाहीं॥२१॥ तब बोले ब्रज दूलह राई। गर्व प्रहारी जन
सुखदाई॥ जो प्यारिहि सेवै मन लाई। ताके बश मैं
रहौं सदाई॥२२॥ या सम टोना त्रिभुवन माहीं। व-
शीकरण मोहिं दूजो नाहीं॥ सुनि रुकमिणि जू के
मन मानी। धन्य भाग आपुन को जानी॥२३॥ दोउ त-
न राधा रुक्मिणि सोहैं। मध्य श्यामसुन्दर मन मोहैं
अरु चहुँ पास सकल कामिनि सी। जनु घन घेरि रही
दामिनि सी॥२४॥ अधिक तृषित दृग तृपित न पावैं
दरश सरस पीवत सचुपावैं॥ ब्रज ललना हरि रूप लुभा-
नी। अवलोकत निज दशा भुलानी॥२५॥ नख द्युति
मनहुं इन्दु परकाशा। जन मन उदित विमल आका-
शा॥ चरण सरोज चारु अरुणाई। कुलिशांकुश
ध्वज चिन्ह सुहाई॥२६॥ दोहा॥ जंघ युगल शोभित
मनहुं कदली थम्भ स्वरूप॥ निरखि क्षीण कमनीय
कटि कपिन बस्यो मृग भूप॥१॥ शुभग उदर लाव-
न्य निधि। नाभि भँवर छबि क्षीण॥ तहाँ माल म-
णि रत्न जनु त्रिबलि लहरि द्युति दीन॥२॥ किधौं बा-
ग मनसिज कियो। नाभि सुधा रस कूप॥ मणि प-
चँग फूले विविधि। रोमावली अनूप॥३॥ उरमरकत

गिरि पर मनहुं वगपति राज मणि माल ॥ बाहु विशाल
मनहुं उभय खेलत हैं वरव्याल ॥ ४॥ कंबु कराठ त्रयरेख
युत शोभित अति अभिराम ॥ भ्राजत मणि शुभ कौ-
स्तुभ जा की प्रभा ललाम ॥ ५॥ चिबुक मनोहर दशन
दुति । दामिनि लखति लजाय ॥ कल कुराडल झलक-
त श्रवण । शोभा वरणि न जाय ॥ ६ ॥ नासा शुक सु-
न्दर लसत अधर बिंब फल हेत ॥ पहुँचत नहिं ललचा-
त जनु । अति अद्भुत छवि देत ॥ ७॥ लोचन लोल कपो-
ल पर कुटिल अलक बिथरान ॥ नील कमल पर मधु-
प कुल मनहुं करत रस पान ॥ ८॥ चौपाई ॥ बंक भृकु-
टि मधि तिलक बनाई । ता छवि की उपमा नहिं पाई ।
विशद भाव मरयाद बिहाई । उमगि चली जनु सुन्दर-
ताई ॥ १ ॥ शीश किरीट क्रान्ति की शोभा । लाजत को-
टि अदिति की ओभा ॥ हरि छवि निरखि विवस ब्रज ।
गोरी । तन मन बिसरि भई मति भोरी ॥ २ ॥ अरस पर-
स पर रूप निहारें । चितवत पलक न अन्तर डारें ॥ हरि
यह दशा निरखि सुख पावें । हाव भाव करि प्रेम बढ़ा-
वें ॥ ३ ॥ जा पद कंज सनक उर लावें । नारद आदि नि-
रन्तर ध्यावें ॥ पद पराग रज याँचत योगी । तिहि ब्रज
बनितन मान्यो भोगी ॥ ४ ॥ हरि को सन्तत भक्ति पि-
यारी । ज्यों त्यों कोऊ भजो नर नारी ॥ जिनहिं भई हरि

पद परतीती। भजहिं श्याम रिपु दल मन जीती॥ ५॥ लोचन हरि दरशन पुट पावैं। श्याम सुयश श्रुति सुनि चित लावैं॥ नासा श्याम सुगन्ध लुभानी। रसना हरि हरि बोलत बानी॥ ६॥ सब मग हैं श्यामहिं उरल्यावैं। एकहु क्षण न हरि बिसरावैं॥ जीवन मरण न सुख दुख तिन को। केवल हरि पद धन है जिन को॥ ७॥ खान पान को व्यसन तजैं जे। निःकामी ह्वै हरिहि भजैं जे॥ तिन को हरि नहिं गहरु लगावैं। कोटि कोस तें सरण में आवैं॥ ८॥ अगम सुगम अरु तृणहिं सुमेरू। करत भक्तबश रंक कुबेरू॥ वेद विदित निगमागम गाई। भक्त बश्य प्रभु रहत सदाई॥ ९॥ प्रथम श्याम याचत निज जन को। दृढ़ विश्वास लखत तिहि प्रन को॥ गोबर बनि प्रभु नीके याची। एकत अंग वहां सो काँची॥ १०॥ आपुहिं कान्ह भई ब्रज बाला। प्रेम मगन हिय हरष विशाला॥ सरबस बिसरि श्याम रस पागीं। मनहुं रंक निधि लूटन लागीं॥ ११॥ कैधौं मानहुं गोपी यूथा। निरखत बधहि चकोर बरूथा॥ ब्रज तिय प्रेम बरणि। नहिं जाई। जेहि लखि ऊधो ज्ञान भुलाई॥ १२॥ एकहि दशा सकल ब्रज गोरी। कछुक अधिक वृषभानु किशोरी॥ धन्य धन्य श्री मुख ते भाष्यो। गोपिन

सों अन्तर नहिं राख्यो ॥ २३ ॥ तुम सब अति मम प्रा-
ण पियारी । मों तें कबहुं पलक नहिं न्यारी ॥ कहा ।
भयो हौं बिछुर्‌यो जोई । मन ते बसत सदा ब्रज सोई ॥
२४ ॥ सुनि गोपी हरि अमृत बानी । भई प्रफुल्लित अ-
ति सुख मानी ॥ भोजन बार जानि घनश्यामा । गये
नन्द यशुदा के धामा ॥ २५ ॥ तब प्यारेहि रुकमिणी
उठाई । निज स्नान मन्दिर में ल्याई ॥ पुनि अति मज्जन
करि अन्हवायो । जल सुगंधि अति चित हुलसायो ।
२६ ॥ दोहा ॥ निज कर तें बेणी गुही । कोमल केशव-
नाथ ॥ अंग अंग भूषण सज्यो । मंजुल सब पहिराय ।
१ ॥ खंजन दृग अंजन आंजि बेंदी भाल सँवार ॥ अति
सप्रीति प्यारिहिं सकल कीन्हे सुभग सिंगार ॥ २ ॥
शोभा अद्भुत को गनहिं सहज रूप की राश ॥ तबशत
सजि शृंगार मनु । किय शशि कोटि प्रकाश ॥ ३ ॥ इ-
हि बिधि सब ब्रज सुन्दरिहि भूषण बसन बनाय ॥ पु-
नि कीन्हे भोजन विविधि व्यंजन वरणि न जाय ॥ ४ ॥
मृदु मंजुल पकवान शुचि सरस मिठाई चार ॥ षट रस
नाना भाँति के । किये अनेक प्रकार ॥ ५ ॥ करत बिया-
रू राधिका । सब ब्रज कुँवरि समेत ॥ परसत रानी रुक-
मिणि निज कर करि अति हेत ॥ ६ ॥ सतभामा अति
मन कुढ़त । देखि न हृदय समाय ॥ पुनि पुनि हँसि

हँसि कहत सुख।बाणी।व्यंग सुनाय॥७॥कत परसत
पकवान बहु भावत है है नाहिं॥ दूध दही घृत देहु
ज्यों रुचि सों भोजन खाहिं॥ ८ ॥चौपाई॥ सुनि सु
नि सतभामा की बानी। गोपी आपुस में बतियानी॥
यह रानी अति खोटी भारी। घूँघट में मुसुकावत ।
प्यारी॥१॥ मन में कहत और नहिं कोई। यह रानी
सतभामा होई॥ भोजन करि पुनि अचमन कीन्हा
रुकमिणि सब कर बीरा दीन्हा॥ २॥ भयउ अस्त र-
वि निशि प्रगटानी। निज निज सदन गईं सब रानी
इहाँ नन्द यशुमति के पासा। करत बात हरि परम।
हुलासा॥ ३॥ निशि बड़ जानि सेज बिछवाये॥ य-
दु नायक निज मन्दिर आये॥ रुकमिणि तब प्यारि-
हिं पौढ़ाई। सब की सादर सेज बिछाई॥ ४॥ आपुन
हरि के मन्दिर आई। चापन लगी चरण सुखदाई॥
मनमोहन को नींद न आई। रुकमिणि प्रति यों ।
कह्यो बुझाई॥ ५॥ अबलौं प्यारी पौढ़ी नाहीं। या
तें नींद न मो दृग माहीं॥ तब रुकमिणि कर जोरि
सुनाई। हौं प्यारिहि प्रथमहिं पौढ़ाई॥ ६॥ श्याम
कह्यो देखहु किन जाई। वा को नींद नेकु नहिं आई
राधा को जब जननि सुवावे। तब सो सखा तेहिं दूध
पियावे॥७॥परी बानि यह बारे पनकी। को जाने

(क्रम)

अब वाके मन की ॥ यह सुनि के रुकमिणि उठि । धाई । तुरतहि निज कर पय औटाई ॥ ८ ॥ कनक कटोर में ढरकायो । अतिहि उतावल में न सिरोयो ॥ हेत सहित अंचर दे ल्याई । राधा को जागतहीं पाई ९ ॥ फूंकि फूंकि पय प्यारिहि प्याई । पुनि आपुन हरि मन्दिर आई ॥ बहुरि लगी त्यों चरणन चापन । सीकरि हरि खेंच्यो पग आपन ॥ १० ॥ रुकमिणि कहत गई हौं नीके । अबहीं कौन व्यथा भइ जी के प्यारी को तातो पय प्याई । या तें जस्यो पस्यो पग आई ॥ ११ ॥ सोय रहो न सुनी अब ताई । अचरज बात न परत पत्याई ॥ सुनु रुकमिणि मैं सांची भाखें तुम ते कछु नहिं अन्तर राखौं ॥ १२ ॥ सदा एक रस मन क्रम बानी । राधा मों पै रहत लुभानी ॥ उर में राखत चरण हमारे । तातें परे दूध के छारे ॥ १३ ॥ निशि । वासर मेरोही ध्याना । मोहिं छाड़ि तिहि बात न आना ॥ मैं हूं वा ते होत न न्यारो । झूठ कहौं तो सपथ तुम्हारो ॥ १४ ॥ तबहि श्याम निज पांय दिखाई । तब रुकमिणि मन अति पछताई ॥ प्रीति समुझि मन में सुख मानी ॥ धन्य धन्य राधा को जानी ॥ १५ ॥ बहुरि कहत हरि जू सों लागी । हौं कह तुम्हरी नहिं अनुरागी ॥ बसत नहीं कत मो उर माहीं । सांच कहहु

प्रभु यह हम पाहीं ॥ २६ ॥ दोहा ॥ श्याम कही सुनु रु-
कमिणी सम पद तो उर नाहिं ॥ सदा बसत तुम्हरे चर
ण मेरे हिरदय माहिं ॥ १ ॥ ऐसी विधि बहु बात कहि रु-
कमिणि को समुझाय ॥ दीरघ रजनी जानि अति स-
यन कियो यदुराय ॥ २ ॥ इत प्यारी को कल नहीं ब-
ढ्यो हृदय दुख पीन ॥ तरफरात अति सेज पर जल बि-
हीन जिमि मीन ॥ ३ ॥ नींद न आवत नयन में कहत
अलिन प्रति बैन ॥ नन्द नन्द ब्रज चन्द वर कहाँ गये
सुख दैन ॥ ४ ॥ मिले श्याम जान्यो जगत मिट्यो न
बिरह वियोग ॥ हौं बिरहिन बिरहिनि रही घर घर भो-
गत भोग ॥ ५ ॥ बार बार आवत मनहिं मरिय सखी
कछु खाय ॥ काहि परे खो कीजिये वे गनिन के गाय
६ ॥ आसा लगि तव प्राण हे अब न राखि हौं एह । जी-
व जाहु तो जाहु वरु निबहो श्याम सनेह ॥ ७ ॥ कहत
सखी सुनि राधिका कत मन होत अधीर ॥ को जानेह-
रि आवहीं । समुझि हमारी पीर ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ अंत
रयामी मदनगुपाला । प्रगट भये मोहन ततकाला ।
गगन वरण राजीव विलोचन । शीस सिखण्ड मद-
न मद मोचन ॥ १ ॥ कुण्डल युगल मनोहर कानन ।
कोटि दिनेश लजत दुति आनन ॥ अलक झलक ।
कपोल पर सोह्यो । देखत ब्रज युवतिन मन मोह्यो ॥ २

(चितवन)

चितवन चारु निरखि छबि भूलीं। अम्बुज इव ब्रज भामिनि फूलीं॥ प्यारी की गति कही न जाई। मनु शशि सकत बरषा पाई॥ ३॥ मन भावन लीन्हें उर लाई। घन दामिनि छबि लखि ललचाई॥ भये परस पर युगल अधीरा। समुझ न परत प्रेम की पीरा॥ ४॥ अति प्रबोध कीन्हे सुखदाई। ब्रज की बिछुरन बिथा नशाई। पुनि वैसहि गोपिन उर लायो। सकल ताप सन्तोष नशायो॥ ५॥ इतने दिनन कहाँ हे प्यारे। अब कबहूं जनि हूजे न्यारे॥ सुधि करि कह्यो पकरि दोउ हाथा। काहे कियो कूबरी साथा॥ ६॥ भोगत भोग कंस की दासी। हम को पठयो योग उदासी॥ यह सुनि श्याम मन्द हँसि दीन्हो। छोभ सकल ब्रज को हरि लीन्हो॥ ७॥ बात नहीं दीन्हो बहराई। करन लगे चरित्र सुखदाई॥ हाँस बिलास परस्पर करहीं। वे ब्रज कुंजकेलि मन धरहीं॥ ८॥ श्यामा श्याम निरखि इक ठौरी। गोपी रास मराडली जोरी॥ सकल करत प्रेम की घातें सुमिरि सुमिरि सोइ रस की बातें॥ ९॥ वे ब्रज भाव धरत ब्रज बाला। लखि अति सुख पावत नँदलाला॥ जा के मन जो जैसी भाई। ता की त्यों अभिलाष पुराई॥ १०॥ श्यामहिं बिसरि गईं सब रानी। और सकल बिसरी रजधानी॥ रुकमिणि तहँहूं रहत ब्रज जन में।

लखि लखि चरित्र अनंदित मन में ॥११॥ हरि राधाके बदन निहारे। अपने भागहि धन्य विचारे॥ श्री सुख कही सुहोना कीन्ही। त्रिभुवन पति निज बश करि लीन्ही॥१२॥ और सकल महलन के माहीं। बिरह विथा फैली चहुँ घाहीं॥ धरत न धीर पीर अति तन में। पैन बसाइ कुढ़त मन मन में॥१३॥ कोउ कहहु हम कहँ विधि प्रतिकूला। उनको सब विधि भा अनुकूला॥ यों महलन बिललावत रानी। ब्रज जन में अटके दधि दानी॥१४॥ नव सुख लेत सकल ब्रज बामा। रहति श्याम सँग आठों यामा॥ हरि सुख निरखि मगन मन सबहिन। मानहुं हम बिछुरे नहिं कबहिन॥१५॥ भाँति भाँति रँग रस उपजावें। नाना विधि सुख कहत न आवें॥ काहू मन कछु साधन राखें। पूरणा भई सकल अभिलाषें॥१६॥ दोहा॥ नन्द यशोदा के निकट। रहत सदा गोपाल॥ बाल चरित्र करत तहाँ। कौतुक सिन्धु कृपाल॥१॥ यशुमति बैसहि श्याम हित गोरस रखति जमाय॥ धौरी धूसरि धेनु पय प्रीति सहित औटाय॥२॥ हरि रुचि लहि नव नीत सर। मथति आपने पान॥ माँगि माँगि के खात नित त्योंहीं श्याम सुजान॥३॥ बदन प्रभा निन्दत बिधुहि लोचन सरस विशाल॥ जलद श्याम तन पीत पट उरमतंग

(माला)

मणि माल ॥ ४ ॥ चरण सरोरुह अरुण छवि महिमा
वरणि न जाय ॥ जिहि सुबास बस ह्वै बँध्यो । शिव म-
न मधुप लुभाय ॥ ५ ॥ सो शिशु लौं ठानत चरित नन्द
सदन के माहिं ॥ क्षण क्षण नव लीला करत । वरणा-
त आवै नाहिं ॥ ६ ॥ कबहूं लोटत गोद में अँगन माय
यशोद ॥ सखन संग खेलत कबहुं बाढ़त प्रेम प्रमोद
७ ॥ देखि देखि सुर सिद्ध मुनि पुनि पुनि मन ललचा-
हिं ॥ कहत धन्य धनि ब्रज जनन इन सम हम भये ना-
हिं ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ तहँ ऋषि हरि दरशन को आये ।
जे कुरुक्षेत्र क्षेत्र में छाये ॥ मारकराड शुक व्यास सप्त
मुनि । नारदादि जे महा तपो धनि ॥ १ ॥ तिनहिं लेन
हरि अग्र सिधाये । सँग हलधर बसुदेव सुहाये ॥ स्वा-
गत्त कहि पद शीस नवाये । ऋषियन आशिष बचन
सुनाये ॥ २ ॥ हरि की छवि अति अतुल विलोकी ।
भये मगन मन सकहिं न रोकी ॥ मुनि की दशा निर-
खि यदु बीरा । श्रवत सरोरुह नयनन नीरा ॥ ३ ॥ कर
तें कर गहिं मन्दिर लाये । मुनि जन मगन प्रेम जल
छाये ॥ अरघ पाद्य दै पूजा कीन्हा । सादर सबहि बरा-
सन दीन्हा ॥ ४ ॥ पुनि कर जोरि कह्यो यदुराई । बड़ी
कृपा कीन्ही ऋषिराई ॥ जा के दरशन देवहिं दुर्लभ
सो प्रभु हम पाये अति सुलभ ॥ ५ ॥ कोटि कोटि जप

तप व्रत कीजै ॥ तीरथ जाय दान बहु दीजै ॥ इह सब किए लहै फल जोई । सतसंगत सों सरा में होई ॥ ६ सकुचि कह्यो सुनि वर विज्ञानी । क्यों न कहो प्रभु ऐसी बानी ॥ राखत जन की सदा बड़ाई । गावत वेद विदित चलि आई ॥ ७ ॥ सकल विदित तुम्हरी प्रभुताई । शिव सहसा नन पार न पाई ॥ नेति नेति कहि तिनहूं बखानत । सो तुम हमरी अस्तुति ठानत ॥ ८ ॥ तुम परब्रह्म विश्व करतारा । नमो नमो तुम बारम्बारा ॥ तुमहिं भजहिं जे कृपानिधाना । तिन को उभय लोक कल्याना ॥ ९ ॥ नाम तुम्हारो आनँद मूला । सुख प्रद सकल शमन भव शूला ॥ जप तप तीरथ दान बतावत । लोगन की मति को भरमावत ॥ १० ॥ तुम सब के गुरु सब के स्वामी । तुम सबहिन के अन्तरयामी ॥ अद्भुत सगुरा चरित्र तुम्हारा । जिहि भजि नर उतरहिं भव पारा ॥ ११ ॥ सुख सन्दोह सदा अविकारा । नर तन धर्यो हरगा भव भारा ॥ तुम निज रूप दुरायो ऐसे दारु मध्य दावानल जैसे ॥ १२ ॥ कोउ पति पुत्र सगो करि मानत । कोऊ शत्रु मित्र करि जानत ॥ तुम्हरी माया जगत उपाया । जैसे को तैसे मग लाया ॥ १३ ॥ जा पर कृपा तुम्हारी होई । रूप तुम्हारो जानै सोई ॥ पुरुष पुरातन अविगत गामी । जय

हरि बार बार प्रणामामी ॥ १४ ॥ सुनहिं पुराण गृही गु-
ण गावैं । सिद्ध मुनी जन तारी लावैं ॥ प्रेम भक्ति बिनु
मुक्ति न होई । सकल ग्रन्थ हम देखे जोई ॥ १५ ॥ नाथ
कृपा अब हम पर कीजे । सगुण भक्ति आपनि प्रभु
दीजे ॥ इहि विधि मुनि हरि के गुण गाई । पुलकित
प्रेम रहे अरगाई ॥ १६ ॥ दोहा ॥ सुनि मुनि जन के वच-
न वर बिहँसे श्याम सुजान ॥ दयो कृपा करि तिन-
हिं हरि सगुण भक्ति वरदान ॥ १ ॥ हरि माया मोह्यो
जगत पहिचानत कोउ नाहिं ॥ श्री वसुदेव न जान-
हीं । अरु बपुरो किन माहिं ॥ २ ॥ ऋषि सन तब व-
सुदेव तहँ कह्यो जोरि युग हाथ ॥ दरश दियो जन
जानि मोहिं । कीन्ह्यो नाथ सनाथ ॥ ३ ॥ शमन सक-
ल अघ दरश तुव । पापी पावन होय ॥ पारस परस
कुधातु ज्यों । डारत अवगुण खोय ॥ ४ ॥ जैसे पर-
म कृपा करी । दरश दियो ऋषि राज ॥ उपदेशिय ।
प्रभु ज्ञान कछु । टूटहिं कर्म समाज ॥ ५ ॥ हौं विषई
वश मोह के गृह सुख में लवलीन ॥ इन्द्री गण के र-
स विवस । रहत सदा आधीन ॥ ६ ॥ सतसंगत सेयों
नहीं कियो न जप तप याग ॥ बादि गमायो जन्म-
नर अजहूं न आयो वाज ॥ ७ ॥ जातें बाढ़े धर्म प्रभु ।
होहिं कर्म दल छीण ॥ सो उपाय मोहिं भाषिये तुम

सुनि प्रेम प्रवीरा ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ सुनि वसुदेव वचन यों भाई । विहँसि कह्यो तिन तें सुनि राई ॥ जासु तनय बलराम कन्हाई । जप तप तिन के को अधिकाई ॥ १ ॥ अखिल ब्रह्माराड उदर हैं जाहीं । ते प्रभु विहरत तव गृह माहीं ॥ अलख अबद्य अखराड अभेवा । कृपा कटाक्ष सुबंछहिं देवा ॥ २ ॥ जा को खोजें विधि भव योगी । ते तव भवन आप भय भोगी ॥ तुम सम भाग न त्रिभुवन माहीं । माया बस सो जानत नाहीं ३ ॥ घट घट प्रयास सध्य को बासा । सबल ठौर ज्यों । भानु प्रकासा ॥ हरि को रूप लखै यों जानी ॥ तिन कहँ कहैं भक्त विज्ञानी ॥ ४ ॥ ता तें मन वच क्रम करि मानी । देव देव इनहीं को जानो ॥ अलख निरंजन ब्रह्म कहावैं । भक्त वश्य प्रभु तन धरि आवैं ॥ ५ ॥ रमारमरा गंजन भव भीरा । जन रंजन भंजन पर पीरा ॥ ऐसे प्रभुहिं भजे नहिं जोई । दीन मलीन दुखित अति । सोई ॥ ६ ॥ सुर नर मुनि इनहीं को ध्यावैं । चारि पदारथ सहजहिं पावैं ॥ तुम को इहि जप तप वैरागा केवल हरि पद तें अनुरागा ॥ ७ ॥ या सम धर्म न दूजो कोई । हरि पद की महिमा नहिं गोई ॥ यद्यपि यथा योग व्यवहारा । कहत तुमहिं यह श्रुति अनुसारा ॥ ८ परम सुथल कुरुक्षेत्र उदारा ॥ इहाँ करहु तुम मख ।

विस्तारा ॥ सुनि ऋषि गिरा परम सचुपायो । निरख-
त हरिहि हरष हिय छायो ॥ ९ ॥ तब मुनीश आज्ञा
चितलाई । यज्ञ करन को सुदिन दिखाई ॥ जिन्हि वि-
धि ऋषि अनुशासन दीन्हा । तिहि विधि सुजन आ-
ज्ञा दीन्हा ॥ १० ॥ करि प्रणाम आयसु शिर धारी । ति-
न सामग्री सकल सँवारी ॥ देश देश तें भूपति आये ।
जिन सबहिन बसुदेव बुलाये ॥ ११ ॥ रानी सब रनिवा-
सहिं आईं । सादर सब को भवन दिवाईं ॥ बहु विधि
होहि नित्य जिवनारा । परसत भोजन सुघर सुवारा
१२ ॥ अन्न बसन बहु धाम भराई । ऋद्धि प्रताप बरणि
नहिं जाई ॥ पुनि सब विप्र वृन्द को बोले । बहुत भाँ-
ति दिये दान अतोले ॥ १३ ॥ परम रुचिर वेदिका बना-
यो । विधिवत मुनि जन यज्ञ करायो ॥ भयो यज्ञ त-
हँ अतिहिं उदारा । सम्पति की कछु रही न पारा ॥ १४
कमला पति जिहिं सुत कहवाहीं । कमला आपु लु-
ब्ध गृह माहीं ॥ तहाँ ऋद्धि की कौन चलावैं । शक्र सं-
पदा निरखि लजावें ॥ १५ ॥ पुनि सूपन पहिरावन
दीन्हा । अति सनमानि बिसर्जन कीन्हा ॥ मुनि जन
गये आपने धामा । हृदय राखि सुन्दर घनश्यामा ॥
१६ ॥ दोहा ॥ परम मगन बसुदेव मन । निरखि श्या-
म बलराम ॥ गौर श्याम शोभा अवधि रूप पुंजगुण

धाम॥ १॥ सुनि सुनि हरि हलधर सुयश देवै अंगन।
माय॥ आनन्दित रनिवास सब बासर सुखद बिहा-
य॥ २॥ मुदित गोप गोपी सकल नन्द यशोदा मात
निशि दिन जात न जानहीं परम प्रफुल्लित गात॥३
ब्रज जन परमानन्द मय परिपूरण मन काम॥ प्रमु-
दित निरखत श्याम नित लोचन सुखद ललाम॥४
ऐसी विधि कुरु क्षेत्र में बीते दिवस अनेक॥ ब्रजबा-
सिन जान्यो नहीं मनहुं भयो क्षण एक॥ ५॥ तब इ-
क दिन कहि देवकी हरि प्रति सब समुझाय॥ बिस-
रि गई तुहि द्वारका रह्यो आय इत छाय॥ ६॥ ब्रज-
जन प्रिय अति जानि तुम कह्यो न अबलों याहि॥ क-
हलौं करिये कान तिन्ह रहत बनत इत नाहि॥ ७॥ बि-
नसत है तुम बिन सकल राज काज नय नीति॥ चल-
हु जाय सुधि लीजिये बहु दिन भये व्यतीत॥ ८॥ चौ-
पाई॥ सुनत कान्ह देवै की बानी। अपनेहू मन में यह
ठानी॥ ब्रज जन मिलन कह्यो इकबारे। अवधि बदे
सु वचन प्रतिपारे॥ १॥ हरि के वचन अन्यथा नाहीं।
जोइ भाषत सोइ करत सदाहीं॥ वचन हेतु प्रभु ब-
लि के द्वारे। ठाढ़े अजहूं होत न न्यारे॥ २॥ वचन हेतु
गृह तजि रघुराई। पुनि बहु भरत जाय समुझाई॥
बहुरि अवध तन कियो न आनन। सीय सहित मैया

प्रभु कानन॥ ३॥ वचन हेतु जन सुत कहवावैं। तजि वैकुराठ गर्भ में आवैं॥ वचन हेतु यशुमति नंद जाये बालपने हित करियय प्याये॥ ४॥ वचन हेतु कुरुक्षेत्र हि आये। ब्रज बासिन के विरह नशाये॥ पुनि सुर काज हेतु सुरराई। द्वारावति को तुरत उठाई॥ ५॥ गंभीर उदधि यदुराई देवे प्रति तब कह्यो सुनाई ब्रज जन जाय बिदा अब कीजे। आपुन द्वारावति सुधि लीजे॥ ६॥ वे सब रहन इहाँ करि जाना। कत दुविधा में राखिय प्राना॥ ऐसे कहि घनश्याम सिधाये नन्द यशोदा के ढिग आये॥ ७॥ मनहीं मन शोचत गिरिधारी। बहुरि कह्यो कर जोरि बिहारी॥ इतने दिनन रहे तुम पासा। भये सकल विधि पूरण आसा॥ ८॥ तुम्हरे चरण तज्यो नहिं जाई। पै अति आय परी कठिनाई॥ सुनि यह यशुमति नन्द सकाने। कहत कहा हरि परत न जाने॥ ९॥ श्याम न सनमुख शीस उठावैं। कम्पत बदन बैन नहिं आवैं॥ बहुत दिवस बीत्यो इहि ठाहीं। सुख में जानि परयो दिन नाहीं॥ १०॥ पुरी द्वारिका में कोइ नाहीं। समुझि सुशोच भयो मन माहीं॥ या तें या को आयसु दीजे। आप जाय ब्रज की सुधि लीजे॥ ११॥ जब यह बचन कहो बलबीरा। नन्द यशोदा भये अधीरा॥ गिरे धरणि।

नयनन बह वारी। कहत न ऐसी काहु मुरारी ॥२२॥ हे
मोहन जीवन ब्रजनाथा। बिरध बैस जनि करहु अना-
था ॥ ब्रज में जाय कहा सुख लैहैं। तुम बिनु का को
निरखि सिरैहैं॥ २३ ॥ तहँ बसुदेव देवकी आई। दशा
देखि नयनन जल छाई ॥ कहत नन्द मो को सँग लीजे
यशुमति रोवत नेकु न धीजे॥ २४॥ मैं यदुनन्दन धाय
कहावत । धायन हूं तो मान बढ़ावत ॥ हौं तो कछू च-
हत हौं नाहीं। मो को रहन देहु गृह माहीं॥ २५ ॥ हमर-
हु सरबस गो धन लीजे। नेकु कन्हैयहि देखन दीजे ॥
सुनि सुनि हरि भरि लेत उसासू। बारिज लोचन मोच-
त आँसू॥ २६ ॥ दोहा ॥ बिरह व्यथा व्याकुल सकल।
ब्रजबासी नर नारि। जित तितहीं रोवत सकल। परि-
गयो हाहाकार॥ १॥ अति रवर भर भइ भीर तहँ। स-
ब के बदन उदास॥ मनु कीन्हे कुरुसेत्र में करुणा। आ-
य निवास॥ २॥ कह्यो हरिहि बसुदेव तब हम इत तें
टरि जाहिं॥ यह्व संताप कलाप दुख देखि सकत दृग-
माहिं ॥ ३॥ मोहन मनहिं विचार करि। ब्रजन प्रेम आ-
धीर ॥ जो हठ करि पठवहु इनहिं। मरि जैहैं मम पीर॥
४॥ तब प्रभु कीन्ही युक्ति निज माया दीन्ही प्रेर ॥ ।
जीव चतुर्दश भुवन जिन्ह करि राखे सब जेर॥ ५॥ जा
माया के बस सकल नारदादि सुर सिद्ध॥ सभा में सेत

(अनाथ)

भुलाय निज। रहत नेक नहिं बुद्ध ॥ ६ ॥ एकन समय विरंचि को दिये बुद्धि बिसराय ॥ हरि ल्यायो हरि के जबहिं ब्रज तें गोपरु गाय ॥ ७ ॥ मथ्यो सिन्धु जब अमिय हित झगरे सुररु सुरारि ॥ सूरत भइ तब मोहनी मोहि रहे मद नारि ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ तहँ ब्रज जन की कौन चलावै। हरि की माया कहत न आवै ॥ फैलि गई चहुंओर उदासी। चलन चलन भाषत ब्रजबासी ॥ १ ॥ माया बिबस रही सुधि नाहीं। चले सकल ब्रजबासी जाहीं ॥ गाय बच्छ धाये तिन साथहिं ॥ उलटि न कोउ देखत ब्रजनाथहिं ॥ २ ॥ जा माया के वे गुण भारी। ता के बस न भई इक प्यारी ॥ यह सुनि प्रश्न करत जो कोई। राधा कात न भई बस सोई ॥ ३ ॥ दूसरी माया आपुहिं राधा। इक गुण ताहि करहि कह बाधा ॥ अग्नि राशि में ज्यों चिनगारी। त्यों माया वृषभान दुलारी ॥ ४ ॥ बैठि रही इक सिरिता गृह प्यारी। बहु विधि समुझावत बनवारी। राधा चित्त नेक नहिं डोलै। बहुरि श्याम तें ऐसे बोलै। ५ ॥ वे दिन बिसरि गये मनमोहन। फिरत रहे मग गोहन दोहन ॥ मोहित चरित अमित हठ ठाने। बिछुरत ही ह्वै गये बिराने ॥ ६ ॥ नेकु राखि यहि ब्रज हग चारे। ऐसे निठुर होत कत प्यारे ॥ यों कहि मौन रहीं ह्वै प्यारी। तब हरि अपने मनहिं बिचारी ॥ ७ ॥ सतभामादिक नारि

बुलाई। तुरतहिं सकल तहाँ चलि आई॥ नयनन की सैनन करि तिनको। कह्यो सबन समुझावहु उनको ८॥ यह सुनि कै मन में हरखानी। प्यारी प्रति बोली सखरानी॥ यदुनायक जो बात बखानत। राधा सों कत मन नहिं आनत॥ ९॥ तुम सम जग चातुर की नागरि। अति परवीरा सकल गुणा आगरि॥ समुझि देखु अपने मन माहीं। या में कछू बड़ाई नाहीं॥ १०॥ पर घर बैठि रही हठ ठानी। एकहि बार छाँड़ि कुल कानी॥ राधा मोहन के रस सानी। कौन सुनै समुझै किहि बानी॥ ११॥ इक गोविन्द ध्यान उर माहीं। दूजी और बासना नाहीं। श्याम बिना जीवन धृग जग में। को फिरिहै चलि इहि हित मग में॥ १२॥ उदरहि मारि कटारिन मरिहौं। बिछुरन बिरह ताप नहिं जरिहौं॥ बरु बटि गरल करहु करपाना। ताल बूड़ि तजिहौं तनु प्राना॥ १३॥ इहि विधि प्यारी मीच बिचारी। श्याम बिथा बिछुरन लखि भारी परी हरखि सरवर पर जाई। निरखि अगाध नीर मन माई १४॥ मन में धरि मन भावन प्यारे। बिब्रज बन के सुख न सँभारे॥ उमगि परी सर में सुख पावन। बिरह अनल की ताप नशावन॥ १५॥ भयो कंठ लौं जल तिहिं ठाहीं जनु सरसिज सोहत सर माहीं॥ हरि चरित्र जानो नहिं जाई। संतत निज जन के सुखदाई॥ १६॥ दोहा॥ प्यारी

प्रेम निरखि कुढ़त। भामा भामिनि अंग॥ इहि लस-
गा लखि परत मुहिं लैंजेहैं हरिसंग॥१॥ रोस बिबस
नहिं रहि सकत हरि सन्मुख आसीन॥ कहत परायो
पीव कह लैंहैं जोरन छीन॥२॥ खिजत भये लोचन अ-
रुग बोलत अति कटु बाल॥ सालत वे जे दुख सहे
कहे सुमन के ग्वाल॥३॥ बहुत दिनन लौं सुख किये-
हु सो अब भूलेहु काह॥ जाय बैठि ब्रजखरक निज अंत
परायो नाह॥४॥ बासुदेव भाषत जगत नृपन कोटि य-
दुनाथ॥ अब इनको नहिं फबत यह कियो तुम्हारो
साथ॥५॥ द्वै दिन शिशु पन व्है गयो दुहत रहे जब धेनु
किये रास रस रंग बन फिरत बजावत बेनु॥६॥ नृपत-
नया सोरह सहस बरी एक सै आठ॥ हेतु प्रीति अब
को गनहिं भई महल की ठाट॥७॥ सेवहु ग्वाल गँवार
निज लायक जानहु जेह॥ लोक वेद तजि हठ करत पै-
ठत हैं पर गेह॥८॥ चौपाई॥ कुल युवती की बातहि
न्यारी। निबहत नेम नाह की प्यारी॥ जननी जनक स-
मर्पत जाहीं। तजत न कबहूं बसू कुल ताहीं॥१॥ इन
बातन आवत नहिं लाजा। झगड़त पर पीतम के का-
जा॥ सुनि सरोष भामा की बानी। सब तें बोली राधा-
रानी॥२॥ कहा कुढ़ि कुढ़ि इतनो दुख पावे। ये गुरा का-
न्हहिं नेकु न भावे॥ इतनो गरब करत मन माहीं। जनु

अरु कोउ जग व्याहो नाहीं ॥ ३ ॥ सकल चहूं दिशि व्याहे
होई । प्रेम पन्थ पावत नर कोई ॥ यह गावत सद ग्रंथन
माहीं । प्रेम बिना नर पावत नाहीं ॥ ४ ॥ नेम धर्‌यो तिन
नेकु न जाने । रहे आपने मरम भुलाने ॥ हरि कबहूं कि-
हि नाते नाहीं । होत प्रेम वश प्यास सदाहीं ॥ ५ ॥ हीन
वरण कुल जाति न जाने । केवल रहत प्रेम रस साने ॥
अधम उधारण हरि को बाना । गणिका तार्‌यो सब
जग जाना ॥ ६ ॥ केवट कीश गिद्ध गज तारे । व्याध नि-
षाद निकृष्ट उधारे ॥ बालि सुतादि प्रभंजन नन्दन । ता-
रे कपि वृन्दहि रघुनन्दन ॥ ७ ॥ विद्या भूति बुद्धि चतुरा-
ई । इन बातन रीझत न कन्हाई ॥ नीच कुचील खल-
हिं नहिं देखें । केवल प्रेम भक्ति करि लेखें ॥ ८ ॥ छप्प-
न कोटि यदु नाते बारे । तिन ते प्यास किती हित प्यारे
व्रज वासी जन अहिर गँवारा । ते हरि जू के प्राण अधा-
रा ॥ ९ ॥ प्रेमहिं हित नातो सब ठाने । हरि प्रति शुद्ध ले-
हि नहिं माने ॥ जननी जनक नेम करि देहीं । ते तो जग-
त मान सब लेहीं ॥ १० ॥ तें अधिकार अधिक कह की-
न्हा । किती अपयश हरि हित शिर लीन्हा ॥ तो पितु य-
श परगट जग माहीं । मणि चोरी दीन्ही हरि पाहीं ॥ ११
मनमोहन शशि परगट कीन्हे । तब खिसियाय ला-
य तुहि दीन्हे ॥ समय परे नर जान्यो जाई । तो पर किती

परी कठिनाई ॥ १२ ॥ कूप मध्य दादुर कह जाने । सिन्धु
अपार सार नहिं माने ॥ या की गति रस रुकमिणि ।
बूझै । प्रेम पन्थ तो कहूँ नहिं सूझै ॥ १३ ॥ आपुन समु-
झत नेमरु प्रेमू । सिखवत परहि गिरा बुधि जेमू ॥ प्रेम
प्रताप विदित नहिं तोहीं । प्रेम विना हरि भक्ति न हो-
हीं ॥ १४ ॥ भक्तन की महिमा को बोले । जिन सँग हरि
आयुध धरि डोले ॥ दुर्वासा हरि भक्तहिं त्रास्यो । प्रभु
सोउ मुनि के गरबहिं नास्यो ॥ १५ ॥ भक्त ऽपमान श्या-
म नहिं करहीं । भृगु की लात हृदय निज धरहीं ॥ भक्त
बश्य सो चक्र चलायो । दुर्वासहि नृप शरण दिखायो
१६ ॥ दोहा ॥ हरि हरिजन अन्तर नहीं । श्री सुख कह्यो
सुनाय ॥ द्वैत भाव जे जानहीं । ते हरि हरिहिं सुहाय ॥
१ ॥ सानुकूल भक्तहि सदा । कबहुन आवत कोह ॥ य-
द्यपि गुण अवगुण करहिं तद्यपि राखत छोह ॥ २ ॥
वेद वदत सब जग विदित हरि हरिजन अनुसार ॥ भ
क्त वश्य प्रभु भक्त हित अकरन करन मुरार ॥ ३ ॥ भ-
क्ति न आवे प्रेम बिनु भक्ति बिना नहिं भक्त ॥ नौधा
भक्ति कहावई प्रेमहिं के आशक्त ॥ ४ ॥ कोटि बश्य
लौं तपत पिय विविधि भाँति करि नेम ॥ हरि हिरदे ।
आवे नहीं जो लगि प्रगट न प्रेम ॥ ५ ॥ सरण भरहू जो
प्रेम करि चित पावे विश्राम ॥ बिनु प्रयास भव निधि

तरइ लहै श्याम पद ठाम ॥ ६ ॥ कहा भयो हरि द्वारका
बसे छाँड़ि ब्रज वास ॥ तद्यपि मन में ह्वै रहे ब्रज जन हीं
के पास ॥ ७ ॥ सुत ते बिछुर किये बिपुल सुर नर मुनि
के काज ॥ सदा निरन्तर बसत ब्रज प्रेम बिवस ब्रजराज
८ ॥ चौपाई ॥ प्रगट प्रेम रवि जा उर राजैं । तहँ खद्योत
नेम कत छाजैं ॥ जौ लगि प्रेम प्रगट नहिं अहई । तौ ल-
गि नेम जगत को गहई ॥ १ ॥ प्रेम रतन जबहीं नर पावै
नेम काच तबही छिटकावै ॥ प्रेम रहित नर सोहहिं कै-
से । सोम विहीन शर्वरी जैसे ॥ २ ॥ प्रेम रहित नर सोह-
हिं कैसे । बिना सरलता साधु जैसे ॥ प्रेम रहित नर सो-
हहिं कैसे । बाग विचित्र हंस बिनु जैसे ॥ ३ ॥ प्रेम बि-
ना नर पशू समाना । प्रेम लह्यो तिन सब कछु जाना ।
प्रेम कथा कछु जात न गायो । शेवरी को चाख्यो फल
खायो ॥ ४ ॥ प्रेम विवस श्री रघुकुल चन्दा । दनुज वृन्द
कर कियो निकन्दा ॥ शक्ति प्रहार हृदय निज लीन्हा
पाछे राखि विभीषण दीन्हा ॥ ५ ॥ भक्तहिं देखि स-
कहिं नहिं भीरा । प्रेम बिबस आपुन सह पीरा ॥ ऐसे
प्रेम बिबस गोविन्दा । बँधे जाय धीवर के फन्दा ॥ ६ ॥
प्रेम बिबस रुकमिणिहि बिबाहीं । अजहूं शिरोमणि
नारिन माहीं ॥ प्रेम विवस द्विज तंदुल खायो । चरणो-
दक लै शीस चढ़ायो ॥ ७ ॥ बिपुल बिभूति दई जग जाने

तबहूं श्याम रहे सकुचाने। प्रेम विवस प्रभु दूत कहाये
पाण्डव हेतु बसीठी धाये ॥ ८ ॥ दुर्योधन की मेवा
त्याग्यो। शाक विदुर घर नीको लाग्यो ॥ भारत सम-
र कियो जब पारथ। प्रेम विवश आपुन भयो सारथ॥
९॥ कीन्ही विपुल प्रेमवश लीला। कहलौं कहिये चरि-
त सुशीला॥ प्रेम विवस प्रभु काह न कीना॥ ब्रज में अ-
ति चरित्र रंगभीना॥ १०॥ शेष महेश सुरेश गणेशा।
अन्त न पायो किनहूं लेशा॥ प्रेम विवश यशुदा के
धामा। ऊखल बाँधि रहे घनश्यामा॥ ११॥ गिरि गो-
वर्द्धन कर पर धारयो। प्रेम विवस बन गैयन चारयो॥
ब्रज बासिन की जूठन खायो। जिहि अवलोकि विरं-
चि लुभायो॥ १२॥ कियो पान दावानल पल में। नंदहे-
तु धाये हरि जल में॥ प्रेम विवस भये गोपीनाथा। इन-
पायन पर परसे माथा॥ १३॥ ऐसे श्याम प्रेम रँग राचे।
षोड़स सहस रूप धरि नाचे॥ जो सुख इन्द्रादिक नहिं
देख्यो। शारद नारद कबहुं न लेख्यो॥ १४॥ जो अज शं-
करादि नित ध्यायो। सो ब्रज गोप सुगम करि पायो॥ ते-
रे अग्र प्रेम का लेखा। लोचन हीन मुकुर मनु देखा॥ १५
सत्य पूर लज्जा छबि गाता। दारुण दया शील हित बाता
जिहि विधि देइ दई सो होई। कोटि करहु सीखे नहिं को-
ई॥ १६॥ दोहा॥ लाख बात की बात यह करिये बक बक

बाद ॥ जिहि व्यापे सोजानहीं । प्रेम सुरस को स्वाद ॥२
जहाँ बसत हरि भक्तउर तहाँ रहत हौं संग ॥ बहुरि गि-
रा करि रटत जब दम्पति परत न भंग ॥ ३॥ जनि गर्वित
मन में रहहु मम सम प्रेम न तोहिं ॥ पूछति किन यदु-
राय सों झूठ साँच की होहिं ॥ ३ ॥ सुनि सुनि श्यामा के
वचन अति अनन्द यदुनन्द ॥ तब सतभामा प्रति क-
ह्यो बिहँसि श्याम सुखकन्द ॥ ४ ॥ राधा कहत सुसत्य
सुहिं इहि सम प्रिय नहिं कोइ ॥ कितनों हू कोऊ करइ
या की सर नहिं होइ ॥ ५ ॥ ब्रज बासिन हित को कहइ
प्रेम पुंज की खान ॥ प्रगटहिं प्रेम अखंड उर करहि जो
इन गुण गान ॥ ६ ॥ प्रेम लख्यो तिन सब लख्यो कछु न स
क बिन प्रेम ॥ लोन बिना भोजन निरस प्रेमहीन नर
नेम ॥ ७ ॥ जिन पायो तिन नेम करि इन जु कही सो सा-
र ॥ भइ खिसियानी सुनत मन रुकमिणि बिनु सब
नारि ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ तब प्यारी प्रति कह्यो कन्हाई
तृकत सर में रही समाई । बाहिर निकसि आव मो
पाहीं ॥ शोच रही कत निज मन माहीं ॥ १ ॥ कहत न
कत उर में जो आई । भावी है सो मेटि न जाई ॥ जो मोह-
न यों वचन सुनायो । तब राधा मन धीरज आयो ॥ २
सुनहु श्याम घन अंतरयामी । करुणानिधि प्रभु त्रि-
भुवन स्वामी ॥ सदा कृपालु अभय के दानी । भक्त ।

सुखद यथा निगम बखानी॥३॥ गुण सागर नागर नँद नन्दन। आनँद कन्द भक्त उर चन्दन॥ सगुण रूप सुन्दर दिव्येशा। इच्छा ग्रहण परम रमेशा॥४॥ रसिक शिरोमणि रास बिहारी। बाँके वंशीधर गिरिधारी॥ब्रज बल्लभ गोपी जन प्यारे। अहो यशोदा नन्द दुलारे॥५॥जो यह वचन मानि के लीजे। माँग्यो दान हमें प्रभु दीजे॥ तो सरवर तें बाहिर आऊं। नातरु याही ठाम समाऊं॥६॥सुनि सप्रेम प्यारी के बयना। भरि लीन्हे दोउ राजिव नयना॥ गद गद कहत कहत कत नाहीं। जो माँगहु। देहौं इहि ठाहीं॥७॥भक्तन्हि कछु अदेय नहिं मेरे। भायत चरणाश्रपथ करि तेरे॥ सदा भक्त को भायो ठानौं। भक्तनहीं के हाथ बिकानौं॥८॥दुख मैं आपु सहौं कठिनाई। भक्त बिरह मोहिं सह्यो न जाई॥ तो से भक्त भाग तें पाऊं। निशि बासर जिन के गुण गाऊं॥९॥ भक्त प्रेम बश्य बिबश रहौं नित। सुमन बास हित अलि जिसि जित नित॥ सृष्टि माँहि भक्तहि मोहिं प्यारा। भक्तनहीं के हित अवतारा॥१०॥ तब राधा बोली मनमोहन। वृंदाबन डोलो तुम गोहन॥ वेभजवेय बासुरी लीन्हे। नटवर साज मनोहर कीन्हे॥११॥ नित्य सँवारी मूरति पेखौं तो मैं बहुरि जाय ब्रज देखौं॥ नातरु साँची कहत बिहारी। यह तन तुम पर है बलिहारी॥१२॥ सुनत वचन।

प्रभुकरुणाश्रयना। एवमस्तु बोले सुखदयना। यह सुनि
के प्यारी सचुपाई। निकसि ताल तें तट पर आई॥ २३
ताक्षण लखी राधिका ऐसी। प्रगटी रमा सीर निधि जै
सी॥ तब रुकमिणि वर बसन सँवारी। हित करि खुनि
पहिराई सारी॥ २४॥ मिलीं परस्पर उभय सुहाई। प्री-
ति रीति कछु जात न गाई॥ कौतुक निधि हरि एक अ-
नन्ता। द्वै तन धारि लये भगवन्ता॥ २५॥ एक द्वारिका
नृप तन धारी। धरणी हित प्रभु पातक हारी॥ राधहिं
तातें संग न लीन्हा। अचल वेष हरि ब्रज हित कीन्हा
२६॥ दोहा॥ निराकार निर्गुण यदपि। तदपि सगुण ध-
रि देह॥ करत फिरत नाना चरित केवल भक्त सनेह॥
१॥ गिरा ज्ञानहूं अगमगति अंत न लह गोरीश। नित
नूतन गुण गावहीं। रसना सहस अहीश॥ २॥ निज मु-
ख तें भाख्यो यही भक्त अतिहिं प्रिय मोहिं॥ भक्त व-
चन उलघों नहीं अविहित बिहित जो होहिं॥ ३॥ भ-
क्तन की महिमा अमित पार न पावै कोय॥ जहाँ भ-
क्त जन पग धरैं अवश्य तीरथ सोय॥ ४॥ भक्त संग
छाड़ों नहीं सदा रहत तिन पास॥ जहाँ न आदर भक्त
को तहाँ न मेरो बास॥ ५॥ फिरत धाम वैकुण्ठ तजि
भक्तजनन के काज॥ जोइ जोइ जन मन भावहीं धार
त सोइ तन साज॥ ६॥ ज्यों विहंग बश पींजरे रहत।

आधीन ॥ त्योंहीं भक्ताधीन प्रभु निज जन हित तन ली-
न ॥७॥ ऐसे प्रभुहिन जे भजहिं ते नित भव भ्रम अन्ध
भक्ति किये निज प्रभु सदा करत ताहि निरबन्ध ॥८
चौपाई ॥ इच्छा मात्र सकल जग करता । पालन हार
सकल संहरता ॥ कम्पत काल जासु भय भारी । सोई
भक्ताधीन मुरारी ॥१॥ भक्तन हित नाना तन धारी
शुक सनकादिक गावत हारे ॥ अति अलक्ष्य गति
जानि न जाई । वेदहु जा की भेद न पाई ॥ पूरण ब्रह्म
सच्चिदानन्दा । परमानन्द दवन दुख द्वन्दा ॥ आदि पु-
रुष सचराचर रूपा । अज अद्वैत अखण्ड अनूपा ॥३
अभय असंग अनीह अनामा । अमित अरूप ज्यो-
ति मय धामा ॥ परम उदार विश्व के मण्डन । दीनद-
याल भक्त भय खण्डन ॥४॥ सन्तत सन्तहि रहत म
रल से । खल वन गहन हिं दहन अनल से ॥ चिन्तित
दायक सुरतरुवर से । तम भ्रम हरण दिवाकर कर से
५॥ निधन जनन को कोटि धनद से । मुनि मन शिखि-
हि सघन नारद से ॥ पतितहिं पावन सुरसरि तट से ॥
भव बोहित तारण केवट से ॥६॥ शत्रु निकर को म-
हा सुभट से । गोपी जन को अति लम्पट से ॥ निकट
निहारत निपट निडर से । दूरि बिलोकत अतिहि वि-
कट से ॥७॥ सन्तत हरि जैसे को तैसे । ठानत कबहूं

नाहिं अनेसे ॥ हरि की गति हरिहीं बनि आवे। कहत सुनत किहिं समुझि न आवे ॥ ८॥ धरि नटरूप राधिका साथा। वृन्दावन आये व्रजनाथा ॥ वयकिशोर नव युगल बिहारी। रहत सदा ब्रजनन्द कुमारी ॥ ९॥ जिनहिं प्रेम तें नयन निहारे। तन मन धन छवि पर लखिवारे ॥ मोर मुकुट गुंजा बन माला। कटि काछनी पट पीत रसाला ॥ १०॥ नील कमल दल मंजुल बरण। नयन चपल अनियारे अरुण ॥ मकराकृत कुण्डल श्रुति सोहैं। छवि अविलोकि मैन मन मोहैं ॥ ११॥ अंग अंग आभूषण सुन्दर। शोभित जनु शोभा के मंदिर वे बन धातुन चित्रित कीन्हे। कनक लकुटिया कारव हि लीन्हे ॥ १२॥ मधुर मन्द मृदु मुरलि बजावत। मुख ढिग लसत वेध कर छाजत ॥ वाम अंग सोहत श्री प्यारी। छवि की सीव असित उजियारी ॥ १३॥ मणिमय भूषण भूषित चारू। कीन्हे शुभ षोड़श शृंगारू युगुल मनोहर छबि की शोभा। भ्राजत कोटि स्मर शशि ओभा ॥ १४॥ वृन्दावन चैतन्य स्वरूपा। कृष्ण विहार हेतु यदु रूपा ॥ चिन्तामणि मय महा सुदेशा परसत रहत न अघ लवलेशा ॥ १५॥ वेई कदम कुंज की छाया। जेहि लखि मिटत मोह मद माया ॥ सुमन सुगन्ध झरत शाखा तें। गुंजत भ्रमर भ्रमत मद ।

मात

माते ॥२६॥ दोहा ॥ परम सघन वे घन सघन। कुंज पु-
ज छवि धाम ॥ वेई द्रुम तरु हरित अरु। लता सलेस
ललाम ॥१॥ वेई बरही नटत बर कूकत कोकिल कीर।
वे मराल कल रव करत वे यमुना के तीर ॥२॥ वे रत ग
म्रग बोलत विविधि बहत त्रिविध सुसमीर॥ प्रफु-
ल्लित वे कैरव कमल वे तरंग वे नीर ॥३॥ वेई विपिन
बसन्त नित वेई गोपी वृन्द ॥ वे रजनी रस रास बर कर
त नवल ब्रजचन्द ॥४॥ बरषत गगन विदूष जन सु-
मन सुगन्ध अपार ॥ बंछत वृन्दा बिपिन रज बन्दत
बारम्बार ॥५॥ वे राधा माधव सदा ब्रज में करत बि-
हार ॥ धन्य सुथल परसत चरण रतन जात बलिहार
६॥ प्रेमरतन गावहिं सुनहिं जे सप्रेम नर नारि ॥ क्रम
गम तें पावहीं सकल सुखन को सार ॥७॥ हरि सम
जग कछु बस्तु नहिं प्रेम पन्थ सम पन्थ ॥ सत गुरु स
म सज्जन नहीं गीता सम नहिं ग्रन्थ॥८॥ सोरठा ॥
जो जन होहु सुजान। लीजो चूक सुधारि धरि ॥ बा-
लक अति अज्ञान। हौं अजान जानत न कछु ॥१॥
अति जड़ बड़ि मति मन्द। नहिं कवि बुधि नहिं चतु
र कछु ॥ मो को गमहु न छन्द यह गायों गुरु कृपा ते
२॥ ठारह सै चालीस। चतुर वर्ष जब व्यतित भय।
बिक्रम नृप अवनीश। भये भयो यह ग्रन्थ तब॥३॥

माह माह के माह। अति शुभ दिन सित पंचमी ॥ गा-
यो परम उछाह। मंगल मंगल बार वर ॥ ४ ॥ कह्यो ग्र-
न्थ अनुमान। त्रय सत अरसठ चौपई ॥ तिहि अर्द्धरु
अठ जान। दोहा सोरह सोरठा ॥ ५ ॥ काशी नाम सु-
ठाम। धाम सदाशिव को सुखद ॥ तीरथ परम लला-
म। शुभग मुक्ति वर दान छम ॥ ६ ॥ ता पावन पुरमा-
हिं। भयो जनम या ग्रन्थ को ॥ महिमा वरणि न जाहिं
सगुण रूप यश रस भर्यो ॥ ७ ॥ कथा नाम सुख मूल
कलिमल दुख भंजत भजत ॥ पावहिं भवनिधि कू-
ल। जा के मन यह रस रमहिं ॥ ८ ॥ कुरुखेत्र शुभ थान
ब्रज बासी हरि को मिलन ॥ लीला रस की खान। प्रेम
रतन गायो रतन ॥ ९ ॥ ॥ इति प्रेमरत्न भाषा समाप्त

इति ॥